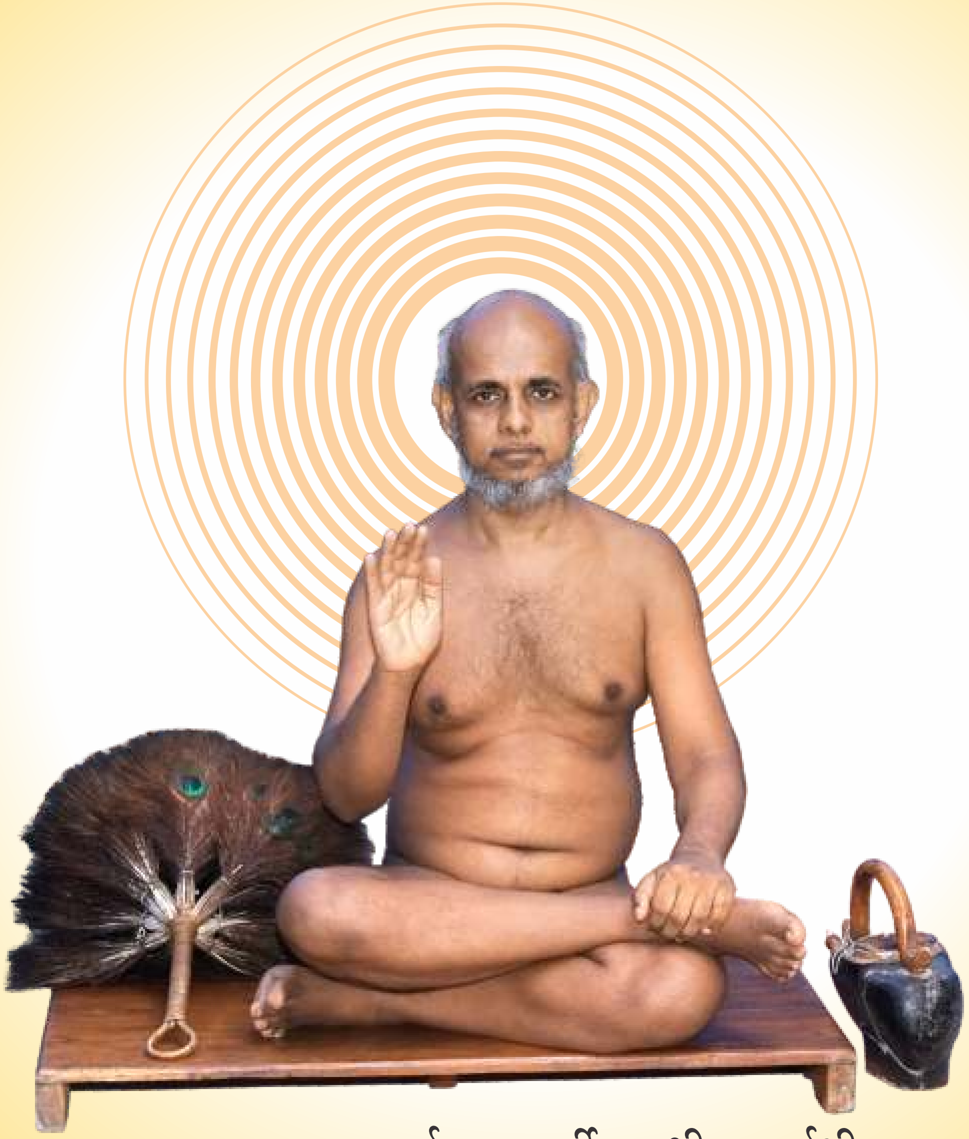

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

विशद अर्हद् धर्मचक्र विधान

कृतिकार :

परम पूज्य आचार्यश्री विशदसागर जी महाराज

प्राप्ति स्थान :

विशद साहित्य केन्द्र

श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, कुआँ वाला,

जैनपुरी रेवाड़ी (हरियाणा)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

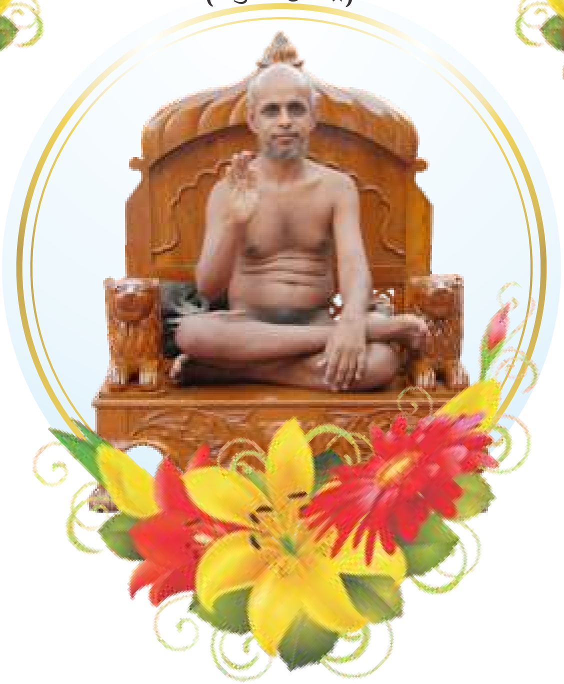

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

कृति : **विशद अर्हत धर्मचक्र विधान**

कृतिकार : ***प. पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति***
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण : प्रथम-2013 ' प्रतियाँ : 1000

संकलन : मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज

सहयोगी : क्षुल्लक श्री 105 विसोमसागर जी महाराज

संपादन : ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) आस्था दीदी, 9660996425 सपना दीदी 9829127533

संयोजन : सोनू, किरण, आरती दीदी, उमा दीदी

प्राप्ति स्थल :
1. जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
   2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट
   मनिहारों का रास्ता, जयपुर
   फोन : 0141-2319907 (घर) मो.: 9414812008
2. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार
   ए-107, बुध विहार, अलवर, मो.: 9414016566
3. विशद साहित्य केन्द्र
   श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुआँ वाला जैनपुरी
   रेवाड़ी (हरियाणा), मो. : 9812502062
4. विशद साहित्य केन्द्र हरीश जैन
   जय अरिहन्त ट्रेडर्स, 6561 नेहरू गली
   नियर लाल बत्ती चौक, गांधी नगर, दिल्ली
   मो. 09818115971, 09136248971

मूल्य : 25/- रु. मात्र

µ%vFkZ lkStU;%µ

Jh eqds'k dqekj tSu

euh"k tSu

5/74, सुन्दर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली-110092

फोन : 09811371317

eqnzd%ikjlizdk'ku¼'kkgnjk fnYyh½Qksuua-%9811374961

HkfDr izlwu

आज के भौतिकवादी युग में इन्सान चारित्र से चलित हो रहा है तथा चाहत में अपने जीवन के चन्द दिनों को व्यर्थ ही खो रहा है। जो एक बार चारित्रवान के पास जाता है तो उसके मन मस्तिष्क में प्रश्न उत्पन्न होता है आखिर बात क्या है? एक यह भी इन्सान है और एक मैं भी। फिर भी इतना अन्तर क्यों यह अपने जीवन को चारित्र से श्रृंगारित कर रहा है और दूसरी ओर मैं हूँ कि जीवन के दिनों को व्यर्थ ही खो रहा हूँ मुझे भी कुछ करना चाहिए। अत: लोग धर्म के प्रति किसी भी प्रकार से आकर्षित हो इस हेतु आज जगह-जगह पर विभिन्न प्रकार से जैन मंदिरों में विशेष प्रकार के आकर्षण के केन्द्र स्थापित किए जा रहे हैं।

कुछ लोगों के द्वारा यह प्रचारित किया जाता है कि धर्म तो वृद्धावस्था की चीज है। धर्म पचपन की लाठी का सहारा नहीं बल्कि बचपन और जवानी में धारण कर मोक्ष की राह पर बढ़ने का नाम है। **"परम पूज्य आचार्य श्री 108 विशदसागर जी महाराज"** द्वारा रचित **"विशद अर्हत धर्मचक्र विधान"** एक ऐसी ही रचना है। जिसके द्वारा सभी धर्मचक्र की आरधना कर अपना कल्याण कर सकें।

/keZpØ ozr fof/k & धर्मचक्र व्रत 22 दिनों में पूर्ण होता है। इसमें 16 उपवास और 6 पारणाएँ सम्पन्न होती हैं। प्रथम उपवास पश्चात् दो पारणा, दो उपवास पारणा, अनन्तर तीन उपवास पारणा, तत्पश्चात् चार उपवास पारणा, पश्चात् पाँच उपवास पारणा एवं अन्त में एक उपवास और पारणा की जाती हैं।

धर्मचक्र व्रत के दिनों में **"ॐ ह्रीं अरिहंत धर्मचक्राय नम:"** इस मंत्र का जाप करें। उद्यापन पर वृहद स्तर पर यह धर्मचक्र महामण्डल विधान भक्तिभाव से सम्पन्न करें।

-मुनि विशालसागर

vkjk/kuk ds lqeu

गृहस्थ जीवन प्राय: अशुभ परिणामों की खान है। आर्तरौद्र ध्यान एवं राग-द्वेष का निरंतर-चिंतन-मनन मानव मस्तिष्क में चलता रहता है। मानव चित्त अति चंचल है। कहा भी है कि- 'पारे की बूंद को पकड़ पाना कदाचित् संभव हो सकता है, किन्तु मानव चित्त की चंचलता को पकड़ना असंभव-सा है। अत: परिणामों को स्थिर करना उसके लिए अति कठिन है। अष्ट द्रव्य के माध्यम से मन को स्थिन करने हेतु पूर्वाचार्यों ने द्रव्य सहित भाव पूजन का उपदेश दिया है।'

जिस प्रकार मूर्तिका अवलम्बन **'तद्गुण लब्ध्ये।'** कि सूक्ति अनुसार मूर्ति के स्वरूप के अनुरूप मन में परिवर्तन लाता है। उसी प्रकार द्रव्य पूजा भी ब्राह्य ध्यान से चित हटाने के लिए गृहस्थों के लिए पावन उपकरण है।

जिनेन्द्र देव की पूजा से पूजक को निश्चित ही पुण्य का अर्जन होकर इष्ट सिद्धि होती हैं। पूजक को तत्क्षण ही इष्ट सिद्धि हो जावे तो भी कोई आश्चर्य की बात नहीं हैं। पूजा के फल को बताते हुये कहा भी है—

किं जंपिएण बहुणातीसुवि लोएसुकिंपिजं सुक्खं।
पुज्जाफलेण सव्वं पाविज्जइ णत्थि संदेहो।।

अर्थ- बहुत कहने से क्या, तीनों लोकों में जो कुछ भी सुख हैं वे सब पूजा के फल से प्राप्त होते हैं, इसमें संदेह नहीं हैं। शाश्वत सुख के आलम्बन हेतु **प. पू. क्षमामूर्ति ज्ञानवारिधि आचार्य श्री 108 विशदसागर जी महाराज** ने **'विशद अर्हत धर्मचक्र विधान'** की रचना कर हम सभी को कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने का सुगम मार्ग दिखाया है।

आचार्य श्री की रचना जनमानस को लाभकारी होवे और सभी को मुक्ति वधु की प्राप्ति हो इसी भावना के साथ आचार्य भगवन के चरण कमलों में कोटिश: नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।

पतित को पावन बनाते है गुरु,
जेठ को सावन बनाते हैं गुरु।
गुरुदेव की महिमा कहां तक कहूँ,
भक्त को भगवान बनाते हैं गुरु।।

सागर की एक बूंद
—ब्र. आरती दीदी

स्तवन

दोहा— **कर्म घातिया से रहित, होते हैं तीर्थेश।**
पूजनीय शत् इन्द्र से, देते सद् सन्देश।।

(शम्भू छन्द)

दोष अठारह से विरहित हैं, अर्हत् जिन मंगलकारी।
ॐकार मय दिव्य देशना, देते हैं जग उपकारी।।
नित्य निरंजन अक्षय अविचल, कहलाए हैं सिद्ध महान।
अर्हत् अपने कर्म नशाकर, अतिशय पद पाते निर्वाण।।1।।
भूतकाल में हुए अनन्तक, उनको वन्दन बारम्बार।
तीर्थंकर होंगे भविष्य में, विशद ज्ञान पाके मनहार।।
वर्तमान के चौबिस जिन हैं, उनका हम करते गुणगान।
सप्त भेद केवलज्ञानी के, ऐसा कहते हैं भगवान।।2।।
केवलज्ञान प्रगट होने पर, समवशरण रचते आ देव।
भक्ति भाव से नत होकर के, वन्दन करते विनत सदैव।।
धर्मचक्र ले यक्ष चतुर्दिक, आगे चलते हैं शुभकार।
होकर भाव विभोर इन्द्र कई, बोला करते जय जयकार।।3।।
धर्मचक्र अनुपम विधान यह, करने वाले जग के जीव।
सब विघ्नों का नाश प्रकाशक, भवि जीवों को रहा अतीव।।
सारे जग का वैभव पाते, इन्द्रादिक पद होता प्राप्त।
भव्य जीव अनुक्रम से बनते, कर्म नाश करके जिन आप्त।।4।।
इस विधान की महिमा अनुपम, बृहस्पति भी ना कह पाये।
कौन करे गुणगान लोक में, कहने वाला भी थक जाये।।
एक बार भी जो विधान यह, भक्ति भाव के साथ करें।
सुख शांती सौभाग्य प्रदायक, निश्चित ही शिवनार वरें।।5।।

इत्याशीर्वाद: पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

मूलनायक सहित समुच्चय पूजन

(स्थापना)

तीर्थंकर कल्याणक धारी, तथा देव नव कहे महान्।
देव-शास्त्र–गुरु हैं उपकारी, करने वाले जग कल्याण॥
मुक्ती पाँए जहाँ जिनेश्वर, पावन तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
विद्यमान तीर्थंकर आदि, पूज्य हुए जो जगत प्रधान॥
मोक्ष मार्ग दिखलाने वाला, पावन वीतराग विज्ञान।
विशद हृदय के सिंहासन पर, करते भाव सहित आह्वान॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञान! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

जल पिया अनादी से हमने, पर प्यास बुझा न पाए हैं।
हे नाथ! आपके चरण शरण, अब नीर चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल रही कषायों की अग्नि, हम उससे सतत सताए हैं।
अब नील गिरि का चंदन ले, संताप नशाने आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण शाश्वत मम अक्षय अखण्ड, वह गुण प्रगटाने आए हैं।
निज शक्ति प्रकट करने अक्षत, यह आज चढ़ाने लाए हैं॥

जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों से सुरभी पाने का, असफल प्रयास करते आए।
अब निज अनुभूति हेतु प्रभु, यह सुरभित पुष्प यहाँ लाए॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज गुण हैं व्यंजन सरस श्रेष्ठ, उनकी हम सुधि बिसराए हैं।
अब क्षुधा रोग हो शांत विशद, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञाता दृष्टा स्वभाव मेरा, हम भूल उसे पछताए हैं।
पर्याय दृष्टि में अटक रहे, न निज स्वरूप प्रगटाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो गुण सिद्धों ने पाए हैं, उनकी शक्ती हम पाए हैं।
अभिव्यक्त नहीं कर पाए अतः, भवसागर में भटकाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम से भी उत्तम शुभ, शिवफल हे नाथ ना पाए हैं।
कर्मोकृत फल शुभ अशुभ मिला, भव सिन्धु में गोते खाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद है अनर्घ मेरा अनुपम, अब तक यह जान न पाए हैं।
भटकाते भाव विभाव जहाँ, वह भाव बनाते आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **प्रासुक करके नीर यह, देने जल की धार।**
लाए हैं हम भाव से, मिटे भ्रमण संसार॥ शान्तये शांतिधारा...

दोहा– **पुष्पों से पुष्पाञ्जली, करते हैं हम आज।**
सुख-शांति सौभाग्यमय, होवे सकल समाज॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्...

पंच कल्याणक के अर्घ्य

तीर्थंकर पद के धनी, पाएँ गर्भ कल्याण।
अर्चा करें जो भाव से, पावे निज स्थान॥1॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महिमा जन्म कल्याण की, होती अपरम्पार।
पूजा कर सुर नर मुनी, करें आत्म उद्धार॥2॥

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तप कल्याणक प्राप्त कर, करें साधना घोर।
कर्म काठ को नाशकर, बढ़ें मुक्ति की ओर॥3॥

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रगटाते निज ध्यान कर, जिनवर केवलज्ञान।
स्व-पर उपकारी बनें, तीर्थंकर भगवान॥4॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आठों कर्म विनाश कर, पाते पद निर्वाण।
भव्य जीव इस लोक में, करें विशद गुणगान॥5॥

ॐ ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा– **तीर्थंकर नव देवता, तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।**
देव शास्त्र गुरुदेव का, करते हम गुणगान॥

(शम्भू छन्द)

गुण अनन्त हैं तीर्थंकर के, महिमा का कोई पार नहीं।
तीन लोकवर्ति जीवों में, ओर ना मिलते अन्य कहीं॥
विंशति कोड़ा-कोड़ी सागर, कल्प काल का समय कहा।
उत्सर्पण अरु अवसर्पिण यह, कल्पकाल दो रूप रहा॥1॥
रहे विभाजित छह भेदों में, यहाँ कहे जो दोनों काल।
भरतैरावत द्वय क्षेत्रों में, कालचक्र यह चले त्रिकाल॥
चौथे काल में तीर्थंकर जिन, पाते है पाँचों कल्याण।
चौबिस तीर्थंकर होते हैं जो, पाते हैं पद निर्वाण॥2॥
वृषभनाथ से महावीर तक, वर्तमान के जिन चौबीस।
जिनकी गुण महिमा जग गाए, हम भी चरण झुकाते शीश॥
अन्य क्षेत्र सब रहे अवस्थित, हों विदेह में बीस जिनेश।
एक सौ साठ भी हो सकते हैं, चतुर्थकाल यहाँ होय विशेष॥3॥
अर्हन्तों के यश का गौरव, सारा जग यह गाता है।
सिद्ध शिला पर सिद्ध प्रभु को, अपने उर से ध्याता है॥
आचार्योपाध्याय सर्व साधु हैं, शुभ रत्नत्रय के धारी।
जैनधर्म जिन चैत्य जिनालय, जिनवाणी जग उपकारी॥4॥
प्रभु जहाँ कल्याणक पाते, वह भूमि होती पावन।
वस्तु स्वभाव धर्म रत्नत्रय, कहा लोक में मनभावन॥
गुणवानों के गुण चिंतन से, गुण का होता शीघ्र विकाश।
तीन लोक में पुण्य पताका, यश का होता शीघ्र प्रकाश॥5॥

वस्तु तत्त्व जानने वाला, भेद ज्ञान प्रगटाता है।
द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन, शुभ वैराग्य जगाता है॥
यह संसार असार बताया, इसमें कुछ भी नित्य नहीं।
शाश्वत सुख को जग में खोजा, किन्तु पाया नहीं कहीं॥6॥
पुण्य पाप का खेल निराला, जो सुख-दुःख का दाता है।
और किसी की बात कहें क्या, तन न साथ निभाता है॥
गुप्ति समिति धर्मादि का, पाना अतिशय कठिन रहा।
संवर और निर्जरा करना, जग में दुर्लभ काम कहा॥7॥
सम्यक् श्रद्धा पाना दुर्लभ, दुर्लभ होता सम्यक् ज्ञान।
संयम धारण करना दुर्लभ, दुर्लभ होता करना ध्यान॥
तीर्थंकर पद पाना दुर्लभ, तीन लोक में रहा महान्।
विशद भाव से नाम आपका, करते हैं हम नित गुणगान॥8॥
शरणागत के सखा आप हो, हरने वाले उनके पाप।
जो भी ध्याये भक्ति भाव से, मिट जाए भव का संताप॥
इस जग के दुःख हरने वाले, भक्तों के तुम हो भगवान।
जब तक जीवन रहे हमारा, करते रहें आपका ध्यान॥9॥

दोहा– नेता मुक्ती मार्ग के, तीन लोक के नाथ।
शिवपद पाने आये हम, चरण झुकाते माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घपदप्राप्त्ये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– हृदय विराजो आन के, मूलनायक भगवान।
मुक्ति पाने के लिए, करते हम गुणगान॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

धर्म चक्र पूजा

स्थापना

धर्म वस्तु स्वभाव बताया, क्षमा आदि दश धर्म कहे।
रत्नत्रय शुभ धर्म अहिंसा, जैनागम में यही कहे।
धर्मचक्र पूजा के द्वारा, धर्म ध्वज फहराना है।
मोक्षमार्ग में कारण है जो, अतिशय पुण्य कमाना है।
तीर्थंकर आदिक ने अनुपम, धर्म ध्वज को पाया है।
धर्मध्वज के आह्वानन् का, हमने लक्ष्य बनाया है॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्र समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्र समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्र समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

जल से अब तक तन को धोया, पर मन को मैला छोड़ दिया।
मन से चिंता की पाप किए, जग के विषयों में मोड़ दिया॥
अब आतम का मल धोने को, यह श्रद्धा का जल लाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्यः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन से भी ज्यादा शीतल, चेतन होता यह ना जाना।
संसार ताप से तपा सतत्, पर रहा स्वयं से अंजाना॥
भव ताप नशाने को कर में, भक्ती का चंदन लाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय निधि पाने हेतू हम, सदियों से भटकते आये हैं।
अक्षय अविनाशी पद मेरा, हम उसकी सुधि विसराए हैं॥

अक्षय पद पाने को अक्षय, यह अक्षत लेकर आये हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: अक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भौरें पुष्पों से बगिया में, खुशबू पाने को जाते हैं।
हम निज आतम की बगिया से, चेतन की खुशबू पाते हैं।
अब काम बाण विध्वंश हेतु, यह पुष्प सुंगधित लाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: कामवाण विध्वंशवनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन का आलम्बन भोजन, यह नहीं समझ में आया है।
इन्द्रिय के विषयों में सुख है, ये मान के जग भरमाया है।।
अब आत्म तृप्ति पाने हेतू, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

होता उजयारा दीपक से, हमने अब तक यह माना है।
आतम का तेज रहा अनुपम, यह नहीं आज तक जाना है।
अब मुक्ती पथ की राह मिले, यह दीप जलाकर लाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की गठरी-ढोकर के, तीनों लोकों में भटकाए।
है मोक्षपुरी में धाम मेरा, न वहाँ आज तक जा पाए।।
अब अष्ट कर्म का धुआँ उड़े, यह धूप जलाने लाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा के फल से मोक्ष मिले, न कभी आज तक जाना है।
जो किया पुण्य या पाप कभी, उसका फल अपना माना है।।
तीर्थंकर पद फल अनुपम है, पाने फल, यहाँ चढ़ाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

काया माया की छाया में, सदियों से फलते आये हैं।
पल-पल बीता है जीवन का, हर पल में कष्ट उठाए हैं।
अब शाश्वत शिवपद पाने को, यह अर्घ्य बनाकर लाए हैं।
हम आठों कर्म विनाश करें, यह भाव बनाकर आये हैं।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **जिनशासन जिनदेव जी, जैनागम जिनधर्म।**
शांतीधारा कर रहे, नाश होंय सब कर्म।।
शांतये शांति धारा...

दोहा- **ज्ञान दीप की ज्योति से, दूर होय अज्ञान।**
पुष्पांजलि करते यहाँ, पाने ज्ञान निधान।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

अर्घ्यावली

दोहा- **तीर्थंकर जिनराज हैं, समवशरण के ईश।**
पुष्पांजलि करते यहाँ, चरण झुकाकर शीश।।

मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

समवशरण की प्रथम पीठ के, पूर्व दिशा मे महितमहान।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष शुभ, सिर पर धारण करे प्रधान।।
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार।
कोटि सूर्य की कांतीवाल, पूज रहे हम बारम्बार।।1।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समोशरण स्थित प्रथम पीठोपरि पूर्वदिक् धर्मचक्रेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में प्रथम पीठ पर, दक्षिण दिश में अतिशयकार।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष शुभ, धारण करता है मनहार॥
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार॥2॥
कोटि सूर्य की कांतीवाल, पूज रहे हम बारम्बार॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समोशरण स्थित प्रथम पीठोपरि दक्षिणदिक् धर्मचक्रेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण की प्रथम पीठ पर, दिशा रही पश्चिम की ओर।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष ले, होता मन में भाव विभोर॥
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार॥3॥
कोटि सूर्य की कांतीवाल, पूज रहे हम बारम्बार॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समोशरण स्थित प्रथम पीठोपरि पश्चिमदिक् धर्मचक्रेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में प्रथम पीठ घर, उत्तर दिशा में जानो आप।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष ले, हरता है सबके संताप॥
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार॥4॥
कोटि सूर्य की कांतीवाल, पूज रहे हम बारम्बार॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समोशरण स्थित प्रथम पीठोपरि उत्तरदिक् धर्मचक्रेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– धर्मचक्र जिनदेव के समवशरण में चार।
चतुर्दिशा में शोभते पूज्य सुमंगलकार॥5॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समोशरण स्थित प्रथम पीठोपरि विराजमानषण्णवति धर्मचक्रेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य– ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मचक्राय नम:

जयमाला

दोहा– धर्मचक्र शुभ यक्ष ले, आगे करें विहार।
जयमाला गाते यहाँ, हम भी अपरम्पार॥

(मुक्तकछन्द)

अरे बन्धुओ! अर्हंतों ने, सच्चा पथ दिखलाया है।
जिओ और जीने दो सबको, विशद पाठ सिखलाया है॥
मिथ्यातम को भेद ज्ञान से, जिनने पूर्ण हटाया है।
सम्यक् ज्योति जगाकर उर में, श्रद्धा गुण प्रगटाया है॥1॥
निज आतम का ध्यान लगाकर, घाती कर्म नशाते हैं।
गुण अनन्त के धारी अर्हत्, विशद ज्ञान प्रगटाते हैं॥
धन कुबेर तब समवशरण की, रचना करने आता है।
सब इन्द्रों के साथ में खुश हो, जय-जयकार लगाता है॥2॥
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष ले, आगे-आगे चलता है॥
सहस रश्मि सम आभा वाला, मानो दीपक जलता है।
सर्व पाप का नाशनहारी, मंगलमय कहलाता है॥
पुण्य रूप जो अतिशयकारी, धर्म ध्वज फहराता है॥3॥
जिसे देखकर के सब प्राणी, विनय सहित झुक जाते हैं॥
श्रावक जन हाथों में लेकर, पावन अर्घ्य चढ़ाते हैं॥
मिथ्यावादी भी दर्शन कर, चरणों में नत होते हैं।
धर्मचक्र के शुभ प्रभाव से, अपनी जड़ता खोते हैं॥4॥
परम अहिंसा का संदेशा, जिसके द्वारा जाता है।
सत्य शिवं तीर्थंकर पद की, जो महिमा को गाता है॥
समवशरण में दिव्य देशना, जिनकी पावन होती है।
मूरख से मूरख अज्ञानी, की जो जड़ता खोती है॥5॥
जिसमें सत्य अहिंसा निस्पृह, अनेकांत बतलाया है।
स्याद्वाद की शैली का शुभ, अनुपम राज सिखाया है॥
जहाँ विकारी भाव और जिन, पक्षपात का नाम नहीं।
रागद्वेष या मोह मान का, किन्चित् होता काम नहीं॥6॥
इन्द्रिय सुख या विषय भोग की, जहाँ दीखती आश नहीं।
वहाँ अतिन्द्रिय आत्मिक सुख का, होता विशद प्रकाश सही॥
रत्नत्रय अरु सप्त तत्त्व का, जिनके द्वारा कथन किया।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ने हेतू, भेद ज्ञान से मथन किया॥
महापुरुष जो मुक्ती पाए, आगे जो भी पाएँगे।
रत्नत्रय को पाकर अपना, जीवन सफल बनाएँगे॥

जिसके आगे पद सब फीके, अर्हन्तो का पद सच्चा।
पूर्ण विश्व में श्रेय प्रदायक, जाने हर बच्चा-बच्चा॥8॥

घत्ता छन्द

जय जय अरहन्ता, शिव तियकन्ता, भव भय हंता सुखकारी।
छियालिस गुणवन्ता, पूजें संता, सोख्य अनन्ता दुखहारी॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समवशरणस्थित धर्मचक्रेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– **तीर्थंकर पद प्राप्त कर, पहुँचे शिवपुर धाम।**
उनका पद पाने ''विशद'', बार बार प्रणाम॥

।।इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत्।।

समवशरण पूजा

स्थापना

सोलह कारण भव्य भावना, पूर्व भवों में भाते हैं।
तीर्थंकर प्रकृति के बन्धक, तीर्थंकर पद पाते हैं॥
धन कुबेर तब इन्द्राज्ञा से, समवशरण बनवाता है।
शत इन्द्रों के साथ श्री जिन के पद शीश झुकाता है॥

दोहा– **मोक्ष मार्ग पर हम बढ़ें, यही भावना एक।**
आह्वानन् करते विशद, जागे हृदय विवेक॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित समवशरण समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित समवशरण समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं।
ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित समवशरण समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

(चौबोला छन्द)

यह मान सरोवर का प्रासुक, जल आज चढ़ाने लाए हैं।
हम भव सिन्धू में भटक रहे, अब मुक्ती पाने आए हैं॥

समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चरणों में चर्चित करने को, चन्दन में केसर घिस लाए।
संसार ताप के नाश हेतु, हम पूजा करने को आए॥
समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह प्रासुक जल में धोकर के, हम अक्षय अक्षत लाए हैं।
अक्षय अखण्ड अविनाशी पद, पाने को दर पे आए हैं।
समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह पुष्प यहाँ नन्दन वन के, हम आज चढ़ाने लाए हैं।
हम कामवाण विध्वंश हेतु, प्रभु चरण शरण में आए हैं॥
समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥4॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनपद की पूजा करने को, नैवेद्य सरस बनवाए हैं।
है काल अनादी क्षुधा रोग, वह यहाँ नशाने आए हैं।
समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥5॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन के दीप बनाकर के, घृत में यह दीप जलाए हैं।
छाया है मोह तिमिर काला, वह मोह नशाने आए हैं॥

समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥6॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु चन्दन से अनुपम, यह ताजी धूप बनाए हैं।
हम कर्म श्रृंखला नाश हेतु, प्रभु यहाँ जलाने आए हैं।
समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रसदार सरस फल ताजे यह, प्रभु चरण चढ़ाने लाए हैं।
है मुक्ती फल अतिशय अनुपम, वह फल पाने को आए हैं॥
समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥8॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अर्घ्य सहित पूजा करने, वसु द्रव्य मिलाकर लाए हैं।
पाने अनर्घ पद नाथ चरण, हम भाव बनाकर आए हैं॥
समवशरण में श्री जिनेन्द्र पद, सादर शीश झुकाते हैं।
श्रद्धा सहित प्रभू चरणों में, भाव सहित गुण गाते हैं॥9॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समवशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **समवशरण जिनदेव का, रचता इन्द्र महान।**
शांतीधारा कर यहाँ, करते हम गुणगान॥ शांतये शांतिधारा''।

दोहा– **समवशरण में इन्द्र सौ, पूजा करते आन।**
पुष्पांजलि कर पूजते, नत हो सभी प्रधान॥ पुष्पांजलिं क्षिपेत्

प्रत्येकार्घ्य

दोहा– **त्रिभुवन पति चौबीस जिन, समवशरण के ईश।**
पुष्पांजलि करते विशद, चरण झुकाते शीश॥
(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

समवशरण की पूर्व दिशा में, मानस्तंभ बना मनहार।
चारों दिश में जिन प्रतिमाएँ, हैं अविकारी मंगलकार॥
जिनका दर्शन किए भव्य जन, का गालित हो जाता मान।
प्रातिहार्य युत जिनबिम्बों का, अर्घ चढ़ा करते गुणगान॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित पूर्वदिक् मानस्तंभ चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण की दक्षिण दिश में, मानस्तंभ है अतिशयकार।
चारों दिश में जिन प्रतिमाएँ, हैं अविकारी मंगलकार॥
जिनका दर्शन किए भव्य जन, का गालित हो जाता मान।
प्रातिहार्य युत जिनबिम्बों का, अर्घ्य चढ़ा करते गुणगान॥2॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित दक्षिणदिक् मानस्तंभ चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्य अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश में समवशरण के, मानस्तभ रहा शुभकार।
जिसमें है जिनबिम्ब चतुर्दिक, जिनकी महिमाा अपरम्पार॥
जिनका दर्शन किए भव्य जन, का गालित हो जाता मान।
प्रातिहार्य युत जिनबिम्बों का, अर्घ चढ़ा करते गुणगान॥3॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित पश्चिमदिक् मानस्तंभ चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्य अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश में समवशरण के, मानस्तभ हैं उच्च महान।
शोभित है जिनबिम्ब चतुर्दिक, वीतराग मय श्रेष्ठ प्रधान॥
जिनका दर्शन किए भव्य जन, का गालित हो जाता मान
प्रातिहार्य युत जिनबिम्बों का, अर्घ चढ़ा करते गुणगान॥4॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित उत्तरदिक् मानस्तंभ चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्य अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्य प्रसाद भूमी है पहली, चैत्य शोभते मंगलकार।
सुर नर किन्नर दर्शन करके, भाग्य जगाते हैं शुभकार॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार।
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकार, वन्दन करते बारम्बार॥5॥

ॐ ह्रीं समवशरण चैत्यप्रसाद भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितिय भूमी रही खातिका, सुरभित फूल खिले मनहार।
घिरी हुई वेदी गोपुर से, शोभापाती है शुभकार॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार।
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकार, वन्दन करते बारम्बार॥6॥

ॐ ह्रीं समवशरण खातिका भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय भूमी लता वेलयुत, जिसमें पुष्प खिले शुभकार।
मन को मोहित करने वाले, भौंरे करते हैं गुंजार॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार॥
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते बारम्बार॥7॥

ॐ ह्रीं समवशरण लता भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तरु अशोक सप्तच्छद चम्पक, आम्रवृक्षयुत भू उद्यान।
चतुर्दिशा की शाखाओं पर, जिनगृह में जिनबिम्ब महान॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार।
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते बारम्बार॥8॥

ॐ ह्रीं समवशरण उपवन भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वज भूमी पंचम कहलाई, ध्वज लहराएँ चारों ओर।
दश प्रकार के चिन्ह शोभते, प्राणी होते भाव विभोर॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार।
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते बारम्बार॥9॥

ॐ ह्रीं समवशरण ध्वज भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात मंदार संतानक तरु, सिद्धार्थ रहे शुभकार।
सुरतरु भू की शाखाओं पर, जिन प्रतिमाएँ मंगलकार॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार।
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते बारम्बार॥10॥

ॐ ह्रीं समवशरण कल्पवृक्ष भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवन भूमी में चार वीथियाँ, शोभा पावें अतिशयकार।
जिनमें सिद्ध बिम्ब शोभित हैं, जिनकी महिमा का न पार॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार।
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते बारम्बार॥11॥

ॐ ह्रीं समवशरण भवन भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मण्डप भूमी है अष्टम, समवशरण में अपरम्पार।
द्वादश गण से शोभा पाती, सुर नर पशु सोहें मनहार॥
वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, शोभित होते अपरम्पार।
उनके चरणों अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते बारम्बार॥12॥

ॐ ह्रीं समवशरण श्री मण्डप भूमि स्थित जिनगृह जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नरेन्द्र छन्द)

समवशरण में प्रथम पीठ के, चार दिशा में सोहे।
धर्म चक्र सर्वाण्ह यक्ष के, सिर पर मन को मोहे॥
श्री विहार में तीर्थंकर के, आगे चलते भाई।
भवि जीवों को जैनधर्म की, दिखलाते प्रभुताई॥13॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित प्रथम पीठोपरि शोभित षड्नवति धर्मचक्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय पीठ पर आठ-आठ ध्वज, जिन महिमा दिखलाएँ।
दस विध मंगल द्रव्य धूप घट, शोभा श्रेष्ठ बढ़ाएँ॥
फहराकर के उच्च ध्वजाएँ, यश गुण कीर्ति बढ़ावें।
जिन की पूजा करें भक्त जो, नित नव मंगल पावें॥14॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित द्वितिय पीठोपरि अष्ट-अष्टम ध्वजाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय पीठ पे समवशरण में, गंध कुटी मनहारी।
रत्न जड़ित है कांतिमान जो, अतिशय महिमाकारी।।
घंटा झालर मंगल द्रव्यों, से जो सोहे भाई।
जिन भक्तों ने जो कुछ चाहा, वह वस्तू ही पाई।।15।।

ॐ ह्रीं तृतिय पीठोपरि चतुर्विशति तीर्थंकर गंध कुटीभ्य: अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य देशना झेला करते, जिन की जग हितकारी।
चार ज्ञान पाते हैं अनुपम, होते ऋद्धीधारी।।
भाव सहित पूजा करते हम, अनुपम अर्घ्य चढ़ा के।
करते हैं गुणगान प्रभु का हर्ष हर्ष गुण गाके।।16।।

ॐ ह्रीं त्रय पीठिकोपरि चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– समवशरण में शोभते, ऋषिवर सप्त प्रकार।
अष्ट द्रव्य से पूजते, नत हो बारम्बार।।17।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित सप्त विधऋषिश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण चौबीस जिन, के हैं महति महान।
उभय लक्ष्मी युक्त जिन, का करते गुणगान।।18।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित चतुर्विंशति जिनेन्द्र जिनबिम्बेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण जिनराज का, होता मंगलकार।
करते हैं गुणगान हम, पाने भवदीय पार।।

ॐ ह्रीं अचिन्त्य विभूति त्रैकालिक तीर्थंकर गणधरादि सहित समवशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– समवशरण जिनराज का, होता मंगलकार।
भव्य जीव जिनके चरण, झुकते बारम्बार।।

(शम्भू छन्द)

इन्द्राज्ञा से समवशरण की, रचना धनद कराता है।
भूतल से भी पंच सहस धनु, नभ में अधर बनाता है।

चार दिशा में मणिमय सुन्दर, जो सोपान रचाता है।
एक एक शुभ चार दिशा में, विथी स्वच्छ बनाता है।।1।।
औषध-पाद लेप बिन प्राणी, शीघ्र वहाँ चढ़ जाते हैं।
इन्द्र नीलमणि का आँगन है, कला देख हर्षाते हैं।।
रत्न चूर्ण से निर्मित बाहर, सुन्दर कोट बनाते हैं।
स्वर्ण मयी खम्बों से शोभित, तोरण द्वार सजाते हैं।।2।।
इन द्वारों के आगे चउ दिश, मानस्तभ बनाते हैं।
तीन पीठिक युत परकोटे, द्वारे चार सजाते हैं।।
अनन्त चतुष्टय धारी हैं जिन, मानों यह दर्शाते हैं।
पूजनीय त्रय लोकों में प्रभु, नाम सार्थक पाते हैं।।3।।
सप्त भूमियाँ समवशरण की, सप्त तत्त्व दर्शातीं हैं।
सप्त भवों से मुक्ति दिलाकर, वात्सल्य प्रगटातीं हैं।।
चार कोट अरु पाँच वेदियाँ, अनुपम देखी जाती हैं।।4।।
प्रथम चैत्य प्रासाद भूमि में, पांच-पांच शुभ महल बने।
एक सौ आठ जिनबिम्ब जिनालय, में जीवों के कर्म हने।।
द्वितिय भूमि खातिका गाई, वैभव जो दिखलाती है।
लता भूमी फूलों के द्वारा, जन मन को हर्षाती है।।5।।
उपवन भूमी के चउ दिश में, चैत्य तरु उद्यान बने।
आम अशोक सप्तच्छद चम्पक, शोभा पाते वृक्ष घने।।
ध्वज भूमी में दश चिन्हों युत, श्रेष्ठ ध्वजाएँ फहराएँ।
कल्प वृक्ष भूमी तरु शाखा, पर जिनके दर्शन पाएँ।।6।।
समवशरण में श्री जिनन्द्र के, भवन भूमि है सुखकारी।
श्री मण्डप भूमी में द्वादश, श्रेष्ठ सभाए मनहारी।।
धर्म चक्र शुभ खड़े यक्ष ले, प्रथम पीठ पर रहते चार।
मंगल द्रव्य धूप घट निधियाँ, द्वितिय पीठ पर ध्वज मनहार।।7।।
तृतिय पीठ के कमलाशन पर, अधर में रहते हैं जिन नाथ।
चतुर्दिशा से दर्शन करके, भव्य झुकाते चरणों माथ।।
दिव्य देशना खिरती प्रभु की, ॐकारमय मंगलकार।
गणधर झेला करते जिसको, नत हो जीवों के हितकार।।8।।

दोहा– **समवशरण में जीव जो, करें प्रभू गुणगान।**
उन जीवों का शीघ्र ही, हो जाता कल्याण॥

ॐ ह्रीं समवशण स्थित चतुर्विंशति जिनेन्द्र जिनबिम्बेभ्यों जयमाला पूर्णार्घ्य निर्व. स्वाहा।

दोहा– **जिनवर की महिमा अतुल, समवशरण दिखलाय।**
श्रद्धा धारे जीव जो, 'विशद' सौख्य शिव पाय॥

पुष्पांजलि क्षिपेत

चैतन्य षट्गुण पूजा

स्थापना

चिदानन्द चेतन है चिन्मय, चिद् विलाश चैतन्य स्वरूप।
परम ब्रह्म परमात्मा पावन, परमानन्दी जो चिद्रूप॥
निराकार अविनाशी अनुपम, शुभ अखण्ड अक्षय अभिराम।
शुद्ध सनातन सिद्ध निरंजन, को है मेरा विशद प्रणाम॥

दोहा– **हैं अनन्त अकलंक शुभ, अव्यावाध महान।**
निष्कलंक निर्मल विमल, चेतन का आह्वान॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुण समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं चैतन्य गुण समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं चैतन्य गुण समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

(अडिल्य छन्द)

नीर शुभ क्षीर सम, शुद्ध हम लाए हैं।
नाश हेतु जन्म रोग, धार त्रय कराए हैं॥
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा।
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥1॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दनादि केशरादि, नीर में घिसाए हैं।
नाश हेतु भवाताप, अर्चना को लाए हैं॥

शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥2॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वच्छ तन्दुलादि, नीर से धुलाए हैं।
अक्षय पद प्राप्त हो, अर्चना को आए हैं॥
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥3॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्प वृक्ष आदि के, पुष्प यह लाए हैं।
काम रोग नाश हेतु, भावना ये भाए हैं
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥4॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ नैवेद्य के, थाल यह सजाए हैं।
क्षुधा रोश नाश हेतु, अर्चना को लाए हैं॥
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥5॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप श्रेष्ठ घृतमय, आन के जलाए हैं।
मोह अन्ध नाश हो, भावना ये भाए हैं॥
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥6॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप चन्दनादि से, श्रेष्ठ यह बनाए हैं।
अष्ट कर्म नाश हेतु, अग्नि में जलाए हैं।
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥7॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव खारकादि फल, थाल में भराए हैं।
मोक्ष फल प्राप्ति का, अवसर ये पाए हैं॥
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥8॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध अक्षतादि, द्रव्य सब मिलाए हैं।
पद अनर्घ प्राप्त हो, हम अर्चना को आए हैं॥
शुद्ध चैतन्य गुण, प्राप्त होवे अहा॥9॥
सार धर्म चक्र का, श्रेष्ठ बश ये रहा॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **शांतीधारा हम यहाँ, करते हैं मनहार।**
जीवन मंगलमय बनें, मिलें मोक्ष का द्वार॥ शान्तये...

सुरभित पुष्पों से यहाँ, पूजा करते नाथ।
शिव पद के राही बने, जोड़ रहे द्वय हाथ॥ पुष्पांजलि

चैतन्य गुण के अर्घ्य

दोहा– **चेतन के गुण छह रहे, काल अनादि अनन्त।**
प्रगटाते हैं जीव जो, बने सिद्ध अर्हन्त॥

(वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(सखी छन्द)

है जीव स्वयंभू ज्ञानी, संसारी भी विज्ञानी।
अस्तित्त्व वान अविनाशी, है शास्वत शिव का वासी॥1॥

ॐ ह्रीं अस्तित्व गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिव शुद्ध बुद्ध अनगारी, स्वतन प्रमाण अविकारी।
जो चिदानन्द अविकारी, वस्तुत्व सुगुण का धारी॥2॥

ॐ ह्रीं वस्तुत्व गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न देव भृत्य न स्वामी, न बन्ध मुक्त शिवगामी।
द्रव्यत्व सगुण अविनाशी, निज में निज गुण की राशि॥3॥

ॐ ह्रीं द्रव्यत्व गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ विषय ज्ञान का गाया, ज्ञानी में ज्ञान समाया।
जो है प्रमेय शुभकारी, अनपुम अनन्त शिवकारी॥4॥

ॐ ह्रीं प्रमेयत्व गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो रहे लघु ना भारी, वह अगुरुलघु अविकारी।
गुण अगुरुलघुत्व कहाए, हर जीव सुगुण यह पाए॥5॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्व गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसमें प्रदेश गुण पाया, जो संख्यातीत बताया।
जो रहे अलौकिक भारी, है चेतन की बलिहारी॥6॥

ॐ ह्रीं प्रदेशत्व गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निस्पृह कलंक अनरूपी, चैतन्य ज्योति चिद्रूपी।
चैतन्य मूर्ति अविकारी, चेतन गुण है मनहारी॥7॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन हैं अमूर्त अविकारी, प्रभु गुणानन्त के धारी।
महिमा है जग से न्यारी, हैं आतम ब्रह्म बिहारी॥8॥

ॐ ह्रीं चेतनत्व गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **द्रव्य दृष्टि से जीव के, गुण यह कहे प्रधान।**
जिन को ध्याये जीव जो, वह भी हों भगवान॥

ॐ ह्रीं शुद्ध गुण संयुक्त श्री अर्हत् जिनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– **चेतन का चिंतन करें, ज्ञानी जीव त्रिकाल।**
चेतन के गुण की यहाँ, गाते हैं जयमाल॥

(शम्भू छन्द)

शास्वत हैं चेतन की निधियाँ, उनको हमने भुला दिया।
यह चेतन है नित्य हमारा, ध्यान कभी न स्वयं किया॥
निज पर का अब ज्ञान जगाकर, भेद ज्ञान प्रगटाना है।

सम्यक् रत्न प्राप्त करना है, मिथ्या भूत भगाना है॥1॥
चेतन तारण तरण कहाए, चेतन है जग में गुणवान।
धन कंचन चेतन के आगे, भाई जानो कांच समान॥
शांती का है वास जास में, भ्रांति का ना लेश कहीं।
सुख क्यों खोज रहा परिजन में, साथ जाएगा कोई नहीं॥2॥
है चित् पिण्ड ज्ञान धन तेरा, जिससे तू अनभिज्ञ रहा।
निज सिंधू में रमण किया ना, अतः कर्म का घात सहा॥
दृष्टी मोड़ स्वयं में अपनी, निज के गुण में होय रमण।
निज में रम जाने से सारे, कर्मों का हो जाय समन॥3॥
अष्ट कर्म का नाश किए नर, बन जाते हैं अनुपम सिद्ध।
अक्षय अनिवाशी बन करके, हो जाते हैं जगत प्रसिद्ध॥
ध्याता ध्येय ध्यान है चेतन, अनुपम वीतराग विज्ञान।
चेतन ही ज्ञाता दृष्टा है, चेतन गुण अनन्त की खान॥4॥
साध्य और साधक चेतन है, ब्रह्म स्वरूपी है अविकार।
चेतन है चिदपिण्ड सर्वगत, अचल अरूपी मंगलकार॥
अचल अबाधक अंतरहित है, सिद्ध शुद्ध चेतन शुभकार।
'विशद' ज्ञान के द्वारा चेतन, नाश करे अपना संसार॥5॥

दोहा- चेतन चित्गुण ना तजे, नहीं होय पर रूप।
प्रगटाते हैं सिद्ध जिन, अपना निजस्वरूप॥

ॐ ह्रीं षट् गुण सहित चेतन गुणेभ्यः जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- चेतनगुण इस लोक में, अटल रहा अविकार।
प्रगटाए चैतन्य गुण, होवे भव से पार॥

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलिं क्षिपेत्

रत्नत्रय पूजा

स्थापना

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण शुभ, रत्नत्रय है मंगलकार।
जिसको धारण करने वाले, पाते मोक्ष महल का द्वार॥

वीतराग निर्ग्रन्थ दिगम्बर, जिसके धारी संत महान।
आह्वानन् करते हम उर में, भाव सहित करते गुणगान॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्र! अत्र आगच्छ-आगच्छ संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्र! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

तर्ज-नन्दीश्वर की चाल

गंगा नदी का शुचि नीर, कलश में भर लाए।
पाने भव दधि का तीर, जिन पद में आए॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥1॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित ये गंध अनूप, घिसकर के लाए।
पा जाएँ निज स्वरूप, पाने को आए॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥2॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत ये धवल महान, धोकर के लाए।
अक्षय पद हे भगवान, पाने को आए॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥3॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

फूलों में भरा सुवास, चउ दिश महकाए।
हो काम वाण का नाश, अर्चा को लाए॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटे॥4॥
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे सुरभित पकवान, हमने बनवाए।
हो क्षुधा रोग की हान, चढ़ाने को लाए॥

हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें॥5॥
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाये यह दीप प्रजाल, जग मग ज्योति जले।
अब नशे मोह का जाल, कर्म का पुंज गले॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटे॥6॥
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खेते अग्नी में धूप, अनुपम गंध मयी।
अनुपम जो रही अनूप, आठों कर्म क्षयी॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें॥7॥
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल विविध प्रकार, थाली भर लाए।
अब शिव रमणी का प्यार, पाने को आए॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें॥8॥
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों द्रव्यों से अर्घ्य, बनाकर ये लाए।
पाने को सुपद अनर्घ्य, चढ़ाने को आए॥
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटे॥9॥
अनुक्रम से हे भगवान! मेरे कर्म घटें॥

ॐ ह्रीं सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **श्री जिनेन्द्र के पद युगल, देते शांती धार।**
मोक्ष मार्ग में हे प्रभु, बनो आप आधार॥ शान्तये शान्तिधारा॥

दोहा- **विशद ज्ञान पाके, प्रभु पाए परमानन्द।**
पुष्पांजलि करते यहाँ कर्मास्रव हो बन्द॥ पुष्पाजंलि क्षिपेत्।

रत्नत्रय के अर्घ्य

दोहा- **सद्दर्शन ज्ञानाचरण, सम्यक् तप के साथ।**
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, विशद भाव से माथ॥

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(चौबोला छन्द)

अष्ट अंगयुत सम्यग्दर्शन, आठ गुणों से युक्त महान्।
प्राणी धारण करने वाले, निज में पाते भेद विज्ञान॥
मोक्ष मार्ग के राही बनते, करते हैं आतम कल्याण।
अल्प समय में भव्य जीव भी, पा लेते हैं पद निर्वाण॥1॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संशय आदिक दोष रहित है, अष्ट अंग युत सम्यग्ज्ञान।
स्व पर भेद जगाने वाले, होते हैं अतिशय विद्वान॥
मोक्ष मार्ग के राही बनते, करते हैं आतम कल्याण॥
अल्प समय में भव्य जीव भी, पा लेते हैं पद निर्वाण॥2॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच महाव्रत समिति गुप्तियाँ, तेरह विध गाया चारित्र।
अतीचार से रहित पालकर, होते प्राणी परम पवित्र॥
मोक्ष मार्ग के राही बनते, करते हैं आतम कल्याण।
अल्प समय में भव्य जीव भी, पा लेते हैं पद निर्वाण॥3॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविध सम्यग्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित के, धारी पाते हैं शिव पंथ।
अष्ट कर्म से मुक्ती पाकर, पा लेते हैं सुगुण अनन्त॥
मोक्ष मार्ग के राही बनते, करते हैं आतम कल्याण।
अल्प समय में भव्य जीव भी, पा लेते हैं पद निर्वाण॥4॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- **रत्नत्रय शिवमार्ग का, उत्तम है सोपान।**
मुक्ती पद पाने विशद, करते हम गुणगान

(पद्धड़ी छन्द)

शुभ सम्यक् दर्शन ज्ञान सार, चारित्र सुतप का नहीं पार।
जो रत्नत्रय धारे ऋशीष, वह तीन लोक के बने ईश॥
वह पाते हैं शिवपथ प्रधान, जो रत्न धारते यह महान्।
जो रत्नत्रय से हीन जीव, वह पाते जग के दुख अतीव॥
वह चतुर्गति का भ्रमण जाल, निर्मित करते हैं तीन काल।
जो तीनों लोकों के मझार, जनते मरते हैं बार-बार॥
है कर्म बन्ध का यही मूल, ये ही प्राणी की रही भूल।
अन्तर में जागा नहीं बोध, चेतन का कीन्हा नहीं शोध॥
अब जिन गुरूओं का किया दर्श, मन में जगाए हैं बड़ा हर्ष।
आगम से पाया विशद ज्ञान, अब निज आतम का हुआ भान॥
है रत्नत्रय जग में प्रधान, जो धारे तीर्थंकर महान्।
गणधर भी पाते रत्न तीन, फिर हो जाते हैं निजाधीन॥
पद चक्रवर्ति का छोड़ भूप, धर रत्नत्रय हों स्वयं रूप।
शुभ रत्नत्रय है तीर्थ धाम, जिसको करता है जग प्रणाम॥
जो मुक्ति वधू का हृदय हार, अतएव सतत् वह लिए धार।
नर तन जो पाया है विशेष, वह सफल होय मेरा जिनेश॥
रत्नत्रय गाया मोक्ष पंथ, धारण करते हैं जिसे संत।
करके कर्मों का पूर्ण अन्त, मुक्ती रानी के बनें कंत॥
है रत्नत्रय का यही सार, हे भाई धारो हृदय हार।
मेरे मन में अब जगी चाह, शुभ मिले 'विशद' अब मुक्ति राह॥

(घत्ता छन्द)

जय-जय सद्दर्शन, ज्ञान आचरण, रत्नत्रय यह श्रेष्ठ रहा।
जय कर्म शत्रुघन, तीर्थंकर जिन, मुक्ति वधु का हार कहा॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्र रत्नत्रय धर्म प्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– **रत्नत्रय की लोक में, महिमा रही अपार।**
'विशद' भाव से जो धरे, पावे भव से पार॥

।इत्याशीर्वादः।पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

दशलक्षण पूजन

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम पाये।
तपस्त्याग आकिन्चन धारी, ब्रह्मचर्यव्रत अपनाये॥
दश धर्मों को धारण करके, प्राणी बनते जगत महान।
'विशद' भाव से हृदय कमल में, करते हैं हम भी आह्वान॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

(ज्ञानोदय छन्द)

कई सागर का जल पीकर भी, तृषा नहीं बुझ पाई है।
समता जल पीने की मन में, याद कभी ना आई है॥
हृदय कलश में श्रद्धा का जल, लेकर आज चढ़ाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य, दसलक्षण धर्मेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

भव ज्वाला से झुलस रहे हम, चैन कहीं ना पाई है।
इन्द्रिय सुख की नहीं कामना, निज की चाह सताई है॥
विशद भाव का चन्दन चरणों, हे प्रभु आज चढ़ाते हैं॥
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन गुण के वैभव से हम, प्रभू सदा अञ्जान रहे।
खण्ड-खण्ड पद पाये हमने, वह पद अपने सदा कहे॥
अक्षय निधि पाने हे स्वामी, अक्षत यहाँ चढ़ाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कामदेव ने अभिमानी हो, तीखे तीर चलाये हैं।
उनके द्वारा भव-भव में हम, घायल होते आये हैं॥
परम ब्रह्म ज्ञानी जिन पद में, सुरभित पुष्प चढ़ाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा रोग के हमने सारे, जग में कई उपचार किए।
भेद ज्ञान औषधि ना पाई, कुपथ मार्ग पर भटक लिए॥
शरणागत बन आज यहाँ हम, शुभ नैवेद्य चढ़ाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते है॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्याघन के कारण मेरा, ज्ञानभानु ना उदित हुआ।
इसीलिए निजगृह ना सूझा, चेतन भी ना मुदित हुआ॥
अब अज्ञान तिमिर का नाशक, पावन दीप जलाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म विध्वंश हेतु यह, चिन्मय धूप जलाते हैं।
कर्म विनाश करें जो प्राणी, वह सिद्धालय जाते हैं।
हैं अधीर यह भक्त आपके, भाव सहित गुण गाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष महाफल पाना दुर्लभ, सुलभ आप करने वाले।
विशद गुणों का उपवन है जो, उसके हो तुम रखवाले॥
शिवपथ पर चल वह पद पाने, श्री फल यहाँ चढ़ाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ द्रव्यों का मोल है लेकिन, आत्म द्रव्य अनमोल कहा।
काल अनादी जड़ द्रव्यों से, क्यों अज्ञानी तोल रहा॥
पद अनर्घ्य की आश लिए हम, पावन अर्घ्य चढ़ाते हैं।
पाद मूल में श्री जिनवर के, अपना शीश झुकाते है॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **पूर्व पुण्य के उदय से, मिलता जिनका दर्श।**
शांतीधारा कर विशद, बढ़े हृदय उत्कर्ष॥

शान्तये शान्तिधारा

श्री जिनेन्द्र के पद युगल, चरण झुकाए शीश।
पुष्पाजंलि कर पूजते, हो त्रिभुवन का ईश॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

अर्घ्यावली

दोहा– **चढ़ा रहे हैं हम यहाँ, दशधर्मों के अर्घ्य।**
पुष्पांजलि करते विशद, पाने सुपद अनर्घ्य॥

(मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

10 धर्म के अर्घ्य

(चौपाई छन्द)

क्रोध कषाय को पूर्ण नशाते, उत्तम क्षमा धर्म प्रगटाते।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥1॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मद की दम का करें सफाया, जिनने मार्दव धर्म उपाया।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥2॥
ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छोड़ रहे जो मायाचारी, होते वह आर्जव के धारी।
होते वह मुनिवर अनगारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥3॥
ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ नाश जिनका हो जाए, वह ही शौच धर्म प्रगटाए।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥4॥
ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असत वचन के हैं जो त्यागी, सत्य धर्म धारी बड़भागी।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥5॥
ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं असंयम जिनको भाए, वह संयम धारी कहलाए।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥6॥

ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म निर्जरा करने वाले, उत्तम तप धर रहे निराले।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहां में मंगलकारी॥7॥

ॐ ह्रीं उत्तम तप धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्विविध संग से रहित बताए, उत्तम त्याग धर्म धारी गाए।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥8॥

ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किंचित् राग रहित अविकारी, उत्तम आकिंचन व्रत धारी।
मुनिव्रत पाते हैं अनगारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥9॥

ॐ ह्रीं उत्तम आकिंचन्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम ब्रह्मचर्य व्रतधारी, होते आतम ब्रह्मविहारी।
मुनिव्रत पाते हैं अनगारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥10॥

ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम क्षमा आदि जो पाए, वह निश्चय शिवपुर को जाए।
होते हैं मुनिव्रत के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥11॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दसलक्षण धर्मेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य–**ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः**

जयमाला

दोहा– **क्षमा आदि दश धर्मधर, होते माला माल।
उत्तम हम दशधर्म को, गाते हैं जयमाल॥**

(चौबोला छन्द)

**उत्तम क्षमा धर्म इस जग में, मंगलकारी कहे जिनेश।
वीतराग रत्नत्रय धारी, मुनिवर पाते क्षमा विशेष॥
मृदु भावों को पाने वाले, पाते मार्दव धर्म महान्।
उत्तम मार्दव प्राप्त हमें हो, जो है जग में महिमावान॥1॥**

**आर्जव धर्म कहाँ सुखकारी, सरल स्वभावी पावे जीव।
शिवपथ का राही बनता है, पुण्य प्राप्त जो करे अतीव॥
निर्मलता हो शौच धर्म से, विशद हृदय जागे संतोष।
साफ होय निज अन्तर का मल, आतम होती है निर्दोष॥2॥
उत्तम सत्य धर्म के धारी, का सब करते हैं विश्वास।
वाणी पर संयम रखता है, बने नहीं वचनों का दास॥
मन इन्द्रिय को वश में करते, प्राणी रक्षा का हो ध्यान।
समिति गुप्ति का पालन करना, उत्तम संयम कहा महान्॥3॥
इच्छाओं का रोध कहा तप, जैनागम में श्री जिनेश।
कर्मों के क्षय हेतू तपते, उत्तम तप जिन ऋषि विशेष॥
उत्तम त्याग पाप मल धोवे, करता उर में ज्ञान प्रकाश॥
कर्मों का संवर हो जाता, निज गुण का हो पूर्ण विकाश॥4॥
किचिंत् मात्र परिग्रह विरहित, रहे अकिंचन के धारी॥
उत्तम आकिंचन के धारी, मुनिवर जानो अविकारी।
शिवनगरी के स्वामी होते, उत्तम ब्रह्मचर्य धारी॥
परम ब्रह्म में लीन रहें नित, पद पाते हैं शिवकारी॥5॥
दश धर्मों के तरु पर चढ़कर, पाते उत्तम फल का स्वाद।
मुक्ती के पहले मानव का, होवे स्वर्गों में उपपाद॥
ऐसे परम धर्म की महिमा, गाता है सारा संसार।
धर्म सरोवर में अवगाहन, करके हो इस भव से पार॥6॥
महिमा सुनकर जैन धर्म की, हृदय जगा मेरे अनुराग।
कर्मों की स्थिति घट जाए, तथा घटे शीघ्र अनुभाग॥
पाकर उत्तम परम धर्म को, करें कर्म का शीघ्र विनाश।
धर्म तरू का होवे नित प्रति, जीवन में अब शीघ्र विकास॥7॥**

दोहा– **धारण कर दश धर्म को, पाएँ शिव सोपान।
कर्म निर्जरा पूर्ण कर, होय शीघ्र निर्वाण॥**

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि ब्रह्मचर्य पर्यंत–दशलक्षण धर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **धर्म कहे दश लक्षणी, अतिशय महिमावान।
हृदय हमारे वास हो, अतः करें गुणगान॥**

॥इत्याशीर्वादः॥

नवदेवता पूजन

(स्थापना)

अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय, सर्व साधु जिनधर्म प्रधान।
जैनागम जिनचैत्य जिनालय, तीन लोक में रहे महान॥
हृदय विराजो आकर मेरे, जिनवर हम करते गुणगान।
सुख-सम्पति सौभाग्य प्राप्त हो, उर में करते हैं आह्वान॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छंद)

कलुषित भावों ने हे प्रभुवर, हमको भव भ्रमण कराया है।
जल से निर्मलता आती ना, यह आज समझ में आया है॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ईर्ष्या से जलकर हे भगवन्, संतप्त हुए अकुलाए हैं।
चन्दन से शीतलता पाकर, संताप नशाने आए हैं॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षयपुर के जो वासी हैं, भव वन में आज भटकते हैं।
अक्षय पद न मिल पाया, दर-दर पर माथ पटकते हैं॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय के सुख की अभिलाषा, विषयों में हमें फँसाए है।
है प्रबल काम शत्रू जग में, सबको जो दास बनाए है॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय जिनपद शीश झुकाते हैं॥4॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा सताती है हमको, संतुष्ट नहीं हम कर पाए।
न क्षुधा शांत हो पाई कई, नैवेद्य बनाकर के खाए॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥5॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर की आँख न खुल पाई, दुःखों के बादल घिरे रहे।
अज्ञान तिमिर में फँसने से, मिथ्यातम के घन घात सहे॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥6॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

संताप हृदय में छाया है, कर्मों की धूप सताती है।
प्रभु चरण छाँव में आने से, झोली क्षण में भर जाती है॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ कर्म के फल से मानव गति, पाकर न धर्म कमाया है।
न 'विशद' मोक्षफल पाया है, यूँ ही कई बार गँवाया है॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥8॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नौका रत्नत्रय की अनपुम, इस भव सिंधु से पार करे।
जो आलम्बन लेते इसका, वह जीवन में शिव नारि वरे॥
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्व साधु को ध्याते हैं।
जैन धर्म आगम चैत्यालय, जिनपद शीश झुकाते हैं॥9॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय समूह अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा-शांतिधारा दे रहे, लेकर प्रासुक नीर।
जीवन शांतिमय रहे, पाएँ भव का तीर॥ शान्तये शांतिधारा...

दोहा-पुष्पाँजलि करते विशद, लेकर सुरभित फूल।
हो जावें हे नाथ अब, कर्म सभी निर्मूल॥ पुष्पाजंलि क्षिपेत्

नवदेवता के अर्घ्य

अर्घ शम्भू

कर्म घातिया नाश किए जिन, दोष अठारह रहित महान।
करुणाकर हैं जगत हितैषी, मंगलमय अर्हत् भगवान॥1॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य भाव नोकर्म नाशकर, उत्तम पद पाए निर्वाण।
अविनाशी अक्षय अखण्ड पद, पाए श्री सिद्ध भगवान॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचाचर अरु समिति गुप्तियाँ, आवश्यक तप तपें महान।
जैनाचार्य धर्म के धारी, त्रिभुवन गुरू कहे गुणवान॥3॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, ज्ञाता जग में रहे प्रधान।
स्व पर के उपकार हेतु जो, देते सबको सम्यक् ज्ञान॥4॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान ध्यान तप में रत रहते, रत्नत्रय धारी गुणवान।
परम दिगम्बर निर्भय साधू, जैन धर्म की अनुपम शान॥5॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठियो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम अहिंसामयी धर्म की, महिमा जो भी गाते हैं।
सुख शांती सौभाग्य प्राप्त कर, मोक्ष महल को जाते हैं॥6॥

ॐ ह्रीं श्री जिनधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐकारमय जिनवाणी को, अपने हृदय सजाते हैं।
विशद ज्ञान के धारी बनकर, केवलज्ञान जगाते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं श्री जिनधर्मांगाय जैनागम अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्रिमाकृत्रिम जिनबिम्बों की, अर्चा करते बारम्बार।
अल्पकाल में भव्य जीव वह, शिवपद पाते अपरम्पार॥8॥

ॐ ह्रीं श्री जिनधर्मांगाय जिनचैत्य अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्रिमाकृत्रिम जिनचैत्यालय, तीन लोक में रहे महान्।
अष्ट द्रव्य से पूजा करके, गाते हैं प्रभु का गुणगान॥9॥

ॐ ह्रीं जिनधर्मांगाय जिनचैत्यालय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **नव देवों के चरण की, पूजा है शुभकार।**
सुख सम्पत्ती प्राप्त कर, होवें भव से पार॥

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हसिद्धाचार्य उपाध्याय सर्व साधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-फैला कर्मों का 'विशद', तीन लोक में जाल।
दोष दूर हों मम सभी, गाते हैं जयमाल॥

(शम्भू छन्द)

अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, सर्व साधु जग में पावन।
जैनागम जिनधर्म जिनालय, जिन प्रतिमाएँ मन भावन॥
दोष अठारह रहित कहे हैं, छियालिस गुणधारी अर्हंत।
कर्मघातिया को विनाश कर, पाते केवलज्ञान अनन्त॥
भूत-भविष्य-वर्तमान के, चौबिस जिन के पद वन्दन।
बीस विदेहों में तीर्थंकर, के पद में करते अर्चन॥

अष्ट कर्म को पूर्ण नाशकर, अष्ट मूलगुण पाते सिद्ध।
अक्षय अनुपम अविनाशी पद, पाते हैं जो जगत् प्रसिद्ध॥
शिक्षा दीक्षा देने वाले, पालन करते पंचाचार।
परमेष्ठी आचार्य हमारे, मोक्ष मार्ग के हैं आधार॥
ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, धारी उपाध्याय गुणवान।
ज्ञान ध्यान तप करें साधना, संतों को देते सद्ज्ञान॥
रत्नत्रय को पाने वाले, साधु करते आतम ध्यान।
मूलगुणों का पालन करके, कर्म निर्जरा करें महान॥
जैन धर्म की महिमा अनुपम, गाता है यह सारा लोक।
अनेकांत अरु स्याद्वाद मय, जैनागम को देते ढोक॥
वीतराग मय कृत्रिमाकृत्रिम, चैत्य कहे हैं अपरम्पार।
चैत्यालय हैं पूज्य लोक में, तिनको वन्दन बारम्बार॥
तीर्थंकर नव देवों के प्रति, वास्तु देव रखते श्रद्धान।
इनकी अर्चा करने वालों, की ना करें जरा भी हान॥
ग्रहारिष्ट भी जिन पूजा से, हो जाते हैं सारे शांत।
और दिशागत विघ्न पूर्णतः, होते 'विशद' पूर्ण उपशांत॥
भूत-पिशाच शाकिनी डाकिनी, आदिक की बाधा हो दूर।
ऋद्धि-सिद्धि पुत्रादिक आयू, धन समृद्धी हो भरपूर॥

दोहा–**पूजा से नवदेव की, होते कर्म विनाश।**
सम्यक् श्रद्धाप्राप्त हो, होवे ज्ञान प्रकाश॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम चैत्य चैत्यालय नवदेवता समूह अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निव. स्वाहा।

सोरठा- तीर्थंकर नवदेव, लोकत्रय मंगल करें।
होय शांति स्वमेव, भव्य जीव शिवपद वरें।

इत्याशीर्वादः पुष्पाजंलि क्षिपेत्

चतुर्विंशति जिन पूजन

स्थापना

वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, के पद में शत् शत् वन्दन।
भक्ति भाव से चरण कमल में, करते हैं हम अभिनन्दन॥

हृदय कमल में आन पधारों, त्रिभुवन पति अन्तर्यामी।
दो आशीष हमें हे भगवन, बने आपके पथगामी॥
चौबीसों तीर्थंकर के हम, चरणों शीश झुकाते हैं।
हम चले मोक्ष के मारग पर, वश यही भावना भाते हैं।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौबोल छंद)

पाप कर्म के कारण प्राणी, जग में कई दुख पाते हैं।
पाकर जन्म मरण भव-भव में, तीन लोक भटकाते हैं॥
जन्म जरा के नाश हेतु प्रभु, निर्मल नीर चढ़ाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

पुण्य कर्म के प्रबल योग से, जग का वैभव पाते हैं।
भोग पूर्ण न होने से हम, मन में बहु अकुलाते हैं॥
संसार वास के नाश हेतु, सुरभित यह गंध चढ़ाते हैं॥
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्व. स्वाहा।

है जीव तत्त्व अक्षय अखण्ड, हम उसे जान न पाते हैं।
फँसकर मिथ्यात्व कषायों में, हम चतुर्गती भटकाते हैं॥
अक्षय अखण्ड पद पाने को, हम अक्षत धवल चढ़ाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

हैं भिन्न तत्त्व हमसे अजीव, वह जग में भ्रमण कराते हैं।
सहयोगी बनकर विषयों में, वह लालच दे बहलाते हैं॥
हो कामवासना नाश प्रभु, यह पुष्पित पुष्प चढ़ाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

आस्रव के कारण ये प्राणी, इस जग में नाच नचाते हैं।
जो क्षुधा व्याधि से हो व्याकुल, मन में अतिशय अकुलाते हैं॥
हम क्षुधा व्याधि के नाश हेतु, चरणों नैवेद्य चढ़ाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

क्षीर नीर सम बंध तत्त्व ने, आतम में बंधन डाला।
सहस रश्मिवत् पूर्ण प्रकाशित, चेतन को कीन्हा काला॥
बंध तत्त्व के नाश हेतु हम, घृत का दीप जलाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

गुप्ति समिति व्रताभाव में, संवर कभी न कर पाए।
कर्मों ने भटकाया जग में, उनसे छूट नहीं पाए॥
अष्ट कर्म के नाश हेतु हम, सुरभित धूप जलाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्व. स्वाहा।

कर्म निर्जरा न कर पाए, सम्यक् तप से हीन रहे।
जग भोगों के फल पाने में, हमने अगणित कष्ट सहे॥
मोक्ष महाफल पाने को हम, श्रीफल यहाँ चढ़ाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

पुण्य पाप के फल हैं निष्फल, उसमें हम भरमाए हैं।
आस्रव बंध के कारण हमने, जग के बहु दुख पाए हैं॥
पद अनर्घ को पाने हेतू, अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हम भरत क्षेत्र की चौबीसी, को सादर शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यावली

दोहा– चौबिस तीर्थंकर बनें, करके कर्म विनाश।
भव सिन्धू को पाटकर, किए सिद्धपुर वास॥
मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

चौबिस तीर्थंकर के अर्घ्य

तर्ज : सास भी कभी बहू थी

धर्म प्रवर्तन प्रभु जी कीन्हें हैं, षट् कर्मों की शिक्षा दीन्हें हैं।
आदिनाथ स्वामी हैं, मुक्ति पथगामी हैं, शिवसुख में करते रमण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥1॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अजितनाथ जी कर्म विजेता हैं, मुक्ती पथ के अनुपम नेता हैं।
शिवपद के दाता हैं, जीवों के त्राता हैं, जिनवर हैं पावन श्रमण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥2॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कार्य असंभव संभव कीन्हें हैं, स्व का चित्त स्वयं में दीन्हें हैं।
संभव जिनस्वामी हैं, मुक्ति पथगामी हैं, चरणों में करते नमन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥3॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अभिनंदन पद वंदन करते हैं, चरणों में अपना सिर धरते हैं।
जग में निराले हैं, शुभ कांतिवाले हैं, सारा जग करता नमन्॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥4॥
ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुमतिनाथ यह नाम निराला है, मति सुमति जो करने वाला है।
पंचम तीर्थंकर हैं, मानो शिवशंकर हैं, कर्मों का करते शमन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥5॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पद्मप्रभुजी पद्म समान कहे, कमल की भाँति आप विरक्त रहे।
महिमा दिखाई है, प्रतिमा प्रगटाई है, बाड़े को कीन्हा चमन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥6॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जिन सुपार्श्व की महिमा न्यारी है, सारे जग में विस्मयकारी है।
जिनवर कहाए हैं, मुक्तिपद पाए हैं, कीन्हें हैं मोक्ष गमन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥7॥
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चन्द्र चिन्ह प्रभु के पद श्रेष्ठ रहा, धवल कांति है चन्द्र समान अहा।
चंदा सितारों में, सोहें बहारों में, प्रभुजी हैं चन्द्र समान अहा॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥8॥
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्पदंत जी प्रभु कहाए हैं, दंत पंक्ति पुष्पों सम पाए हैं।
नाम जो पाया है, सार्थक कहाया है, ऐसा है आगम कथन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥9॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तन मन से शीतलता पाई है, शीतलवाणी अति सुखदायी है।
शीतल जिन चंदन है, जिनपद में अर्चन है, कर्मों का करना हनन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥10॥
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्रेय प्रदाता जो कहलाए हैं, निःश्रेयस पद प्रभुजी पाए हैं।
श्रेय दिला दीजे, देरी अब न कीजे, मिट जाए भवकी तपन।
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥11॥
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वसुपूज्य सुत जग उपकारी हैं, वासुपूज्य जिन मंगलकारी हैं।
चंपापुर प्रभु आए, कल्याणक सब पाए, चंपापुर की शुभ धरन।
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥12॥
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विमल गुणों को पाने वाले हैं, विमलनाथ जिनराज निराले है।
निर्मल जो पावन हैं, अतिशय मनभावन हैं, जग में हैं तारण तारण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥3॥
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

गुण अनंत जिनने प्रगटाए हैं, अनंतनाथ जिनराज कहाए हैं।
जग में न आएँगे, अंत ना पाएंगे, करते हैं सुख में रमण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥14॥
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

धर्मध्वजा जो हाथ सम्हारे हैं, धर्मनाथ जिनराज हमारें हैं।
धर्म के धारी हैं, अतिशय शुभकारी हैं, करते हम जिन पद वरण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥15॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अन्र्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शांतिनाथ पद माथ झुकाते हैं, जिनभक्ती कर हम हर्षाते हैं।
शांती के दाता हैं, जग के विधाता हैं, आते जो प्रभु के चरण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥16॥
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कुंथुनाथ अज लक्षणधारी हैं, प्राणीमात्र के जो उपकारी हैं।
तीर्थंकर पद पाए, चक्री शुभ कहलाए, तेरहवें आप मदन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥17॥
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कामदेव पद जिनने पाया था, चक्ररत्न भी शुभ प्रगटाया था।
अरहनाथ तीर्थंकर, अनुपम थे क्षेमंकर, मैंटे जो जन्म-मरण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥18॥
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सब मल्लों में मल्ल कहाए हैं, कर्म मल्ल जो सभी हराए हैं।
मल्लिनाथ की जय हो, कर्मों का भी क्षय हो, करते हम पद में नमन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥19॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मुनियों के व्रत जिनने पाए हैं, मुनिसुव्रतजी जो कहलाए हैं।
शनिग्रह विनाशी हैं, सद्गुण की राशि हैं, कर्मों का कीन्हा क्षरण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥20॥
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विजयसेन सुत नमि जिन कहलाए, अनंत चतुष्टय अनुपम प्रगटाए।
शिवसुख जो पाए हैं, जग को दिलाए हैं, पाए हैं मुक्ती सदन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥21॥
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वर बनके जिनवरजी आये थे, राजमती को ब्याह न पाए थे।
मुनियों के व्रत पाए, संयम जो अपनाए, पशुओं का देखा क्रंदन॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥22॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

उपसर्ग विजेता जो कहलाते हैं, उनके पद हम शीश झुकाते हैं।
समता जो धारे हैं, शत्रु भी हारे हैं, पारस प्रभु के चरण॥
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥23॥
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वर्धमान सन्मति कहलाए हैं, वीर और अतिवीर कहाए हैं।
महावीर कहलाए, पाँच नाम प्रभु पाए, कर्मों का कीन्हें दहन।
क्योंकि बड़े पुण्य से अवशर आया है, जिनवर का दर्शन पाया है॥24॥
ॐ ह्रीं श्री वर्धमान जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– चौबीसों तीर्थेश के, चरणों विशद प्रणाम।
यही भावना भा रहे, पाएँ हम शिव धाम॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

दोहा– जल चंदन अक्षत सुमन, चरु ले दीप प्रजाल।
फल पाने अतिशय विशद, गाते हम जयमाल॥

(शम्भू छन्द)

ऋषभ चिन्ह लख वृषभनाथ पद, भक्ति भाव से करूँ नमन्।
गज लक्षण है अजितनाथ का, उनके चरणों नित वंदन॥
अश्व चिन्ह संभव जिनवर का, नृप जितारि के प्रभु नंदन।

मर्कट चिन्ह चरण अंकित है, अभिनंदन को शत् वंदन॥
सुमति जिनेश्वर के पद चकवा, जिन का करते अभिवंदन।
पद्म चिन्ह है पद्मप्रभु पद, लेकर पद्म करूँ अर्चन॥
स्वस्तिक चिन्ह सुपार्श्वनाथ का, दर्शन कर नित करूँ भजन।
चन्द्र चिन्ह चंदा प्रभ वंदौ, करूँ निजातम का दर्शन॥
मगर चिन्ह श्री सुविधि नाथ पद, पुष्पदंत उपनाम शुभम्।
कल्पवृक्ष शीतल जिन स्वामी, मुद्रा जिनकी शांत परम॥
गेंडा चिन्ह चरण में लख के, श्रेयांस नाथ को करूँ नमन्।
भैंसा लक्षण वासुपूज्य पद, देख करूँ शत्-शत् वंदन॥
विमलनाथ का चिन्ह है सूकर, विमल रहे मेरे भगवन्।
सेही चिन्ह है अनंतनाथ पद, उनको सादर करूँ नमन्॥
वज्र चिन्ह प्रभु धर्मनाथ पद, नमन करूँ हो धर्म गमन।
शांतिनाथ का हिरण चिन्ह शुभ, शांति दो मेरे भगवन्॥
कुंथुनाथ अज चरण देखकर, पाऊँ मैं सम्यक् दर्शन।
अरहनाथ का चिन्ह मीन है, वीतराग जिन को वन्दन॥
कलश चिन्ह लख मल्लिनाथ को, बंदू पाऊँ ज्ञान सघन।
कछुवा चिन्ह मुनिसुव्रत जिन का, वन्दन कर हो जाऊँ मगन॥
चरण पखारूँ नमीनाथ के, लखकर नीलकमल लक्षण।
शंख चिन्ह पद नेमिनाथ के, इन्द्रिय का जो किए दमन॥
चिन्ह सर्प का पार्श्वनाथ पद, लखकर करूँ चरण वंदन।
वर्धमान पद सिंह देखकर, करूँ चरण का अभिनंदन॥
वृषभादिक महावीर प्रभु की, करूँ नित्य सविनय पूजन।
चौबीसों तीर्थंकर प्रभु के, चरणों में शत्-शत् वंदन॥

दोहा– चौबीसों जिनराज की, भक्ति करें जो लोग।
नवग्रह शांति कर विशद, शिव का पावें योग॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्ताय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा– चौबीसों जिनदेव, मंगलमय मंगल परम।
मंगल करें सदैव, सुख शांती आनन्द हो॥

॥इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

गणधर पूजा

स्थापना

सम्यक् तप के योग से, ऋद्धी हो सम्प्राप्त।
जिसके विशद प्रभाव से, तप कर बनते आप्त॥
मुनिवर ऋद्धी के धनी, जग में हों गुणवान।
हृदय कमल में हम यहाँ, करते हैं आह्वान॥

ॐ ह्रीं श्री झवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(मोतियादाम छन्द)

भराया झारी में शुचि नीर, मिटाने को भव भव की पीर।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥1॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घिसाया चंदन यह गोसीर, मिले अब मुझको भव का तीर।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥2॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द सम तन्दुल लाए जीर, मिले अक्षय पद की तासीर।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥3॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुगन्धित पुष्पित लाए फूल, काम का रोग होय निर्मूल।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥4॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बनाये ताजे यह पकवान, मुझे हो समता का रसपान।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥5॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किया दीपक से यहाँ प्रकाश, मोहतम का हो सारा नाश।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥6॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जलाते धूप अग्नि में आज, नशे कर्मों का सकल समाज।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥7॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़ाते ताजे फल भगवान, मोक्षफल हमको मिले महान्।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥8॥

ॐ ह्रीं श्री श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बनाकर अर्घ्य भराया थाल, चढ़ाते भक्ती से नत भाल।
जिनेश्वर के पावन गणराज, पूजते पाने शिवपद राज॥9॥

ॐ ह्रीं श्री क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रों झ्रौं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **शांती धारा दे रहे, हो शांती भगवान।**
पूजा का फल प्राप्त हो, हो आतम कल्याण॥ शान्तये शांतीधारा.
पुष्पांजलि करते यहाँ, सुरभित लेकर फूल।
सुख-शांती सौभाग्य हो, कर्म होंय निर्मूल॥ पुष्पांजलि...

अर्घ्यावलीः

दोहा- **अर्घ्य चढ़ाते भाव से, गणधर के पद आज।**
शिवपद के राही बनें, मिले आत्म स्वराज॥
मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

गणधर के अर्घ्य

(चौपाई छन्द)

गणधर रहे चौरासी भाई, वृषभसेन आदिक सुखदायी।
आदिनाथ के साथ में जानो, सहस चौरासी अनुपम मानो॥1॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभेश्वरस्य वृषभसेनादि चतुरशीति गणधर चतुर्विंशति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहसेन आदिक शुभकारी, नब्बे गणधर मंगलकारी।
अजितनाथ स्वामी के गाए, एक लाख मुनिवर भी पाए॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनस्य सिंहसेनादि नवतिगणधर लक्षैक सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर एक सौ पाँच बताए, चारुषेण आदि कहलाए।
सम्भव जिनके मंगलकारी, लक्ष दोय मुनिवर अविकारी॥3॥

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनस्य चारुषेणादि पंचाधिकशतगणधर लक्षद्वय सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर एक सौ तीन कहाए, वज्रनाभि आदी शुभ गाए।
अभिनंदन स्वामी के गाए, एक लाख मुनिवर भी पाए॥4॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथ जिनस्य वज्रनाभिआदि त्र्याधिकशत गणधर लक्षैक सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सौ सोलह गणधर गाए, अमर आदि मुनि पदवी पाए।
सुमतिनाथ के मंगलकारी, जिनके पद में ढ़ोक हमारी॥5॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनस्य अमरादि षोडशाधिकशत गणधर लक्षत्रयविंशति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सौ दश गणधर शुभ गाए, वज्र चामरादि कहलाए।
पद्मप्रभु के मंगलकारी, जिनके पद में ढ़ोक हमारी॥6॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनस्य वज्रचामरादि दशाधिक शतगणधर लक्षत्र्याधिक त्रिंशत सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर पंचानवे शुभ जानो, बल आदी अतिशय पहिचानो।
श्री सुपार्श्व जिनके शुभकारी, तीन लाख मुनिवर अविकारी॥7॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनस्य बलादि पंचनवति गणधर लक्षत्रय सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन अधिक नब्बे शुभकारी, दत्तादी गणधर अनगारी।
चन्द्रप्रभु के मंगलकारी, ढाई लाख मुनिवर अविकारी॥8॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनस्य दत्तादित्रिनवति गणधर सार्धद्वय लक्ष सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर कहे अठासी भाई, विदर्भ आदि अनुपम सुखदायी।
पुष्पदंत के मंगलकारी, लाख दोय मुनिवर अविकारी॥9॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथ जिनस्य विदर्भादि अष्टाशीति गणधर लक्षद्वय सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक्यासी गणधर शुभकारी, अनगारादी मंगलकारी।
शीतल जिनके शुभ मनहारी, एक लाख मुनिवर अविकारी॥10॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनस्य अनगारादि एकाशीति गणधर लक्षद्वय सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्थु आदि गणधर शुभ जानो, श्रेष्ठ सतत्तर अनुपम मानो।
श्री श्रेयांस के मंगलकारी, सहस चौरासी मुनि अविकारी॥11॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनस्य कुंथु आदि सप्तसप्तति गणधर चतुरशीति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मादी छियासठ शुभकारी, वासुपूज्य के शुभ मनहारी।
सहस बहत्तर थे अनगारी, गणधर थे मुनिवर अविकारी॥12॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यनाथ जिनस्य धर्मादि षट्षष्ठि गणधर द्विसप्तति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- मन्दरादि पचपन कहे, विमलनाथ के साथ।
गणधर अड़सठ सहस मुनि, झुका रहे हम माथ॥13॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनस्य मंदरादि पंचपंचाशत् गणधर अष्टषष्ठि सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्तनाथ के जयादिक, गणधर कहे पचास।
अन्य मुनी छयासठ सहस, पूरी करते आस॥14॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनस्यजयादिपंचाशत् गणधर षट्षष्ठि सहस्र लक्षद्वय सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरिष्टादी चालीस त्रय, धर्मनाथ के साथ।
गणधर मुनि चौंसठ सहस, तिन्हें झुकाएँ माथ॥15॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनस्य अरिष्टसेनादि त्रिचत्वारिंशत गणधर चतुःषष्ठि सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्रायुध आदी महा, गणधर थे छत्तीस।
शांतिनाथ के साथ में, बासठ सहस्र मुनीश॥16॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनस्य चक्रायुधादि षट्त्रिंशत् गणधर द्विषष्ठि सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर कुन्थूनाथ के, स्वयंभ्वादि पैंतीस।
साठ सहस्र मुनिराज पद, झुका रहे हम शीश॥17॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनस्य स्वयंभू आदि पंचत्रिंशत् गणधर षष्ठि सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुम्भादी अरनाथ के, गणधर जानो तीस।
सहस पचास मुनिराज पद, झुका रहे हम शीश॥18॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथ जिनस्य कुंभादि त्रिशत् गणधर पंचाशत् सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर मल्लीनाथ के, विशाखादि अठबीस।
अन्य मुनीश्वर जानिए, श्रेष्ठ सहस चालीस॥19॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनस्य विशाखादी अष्टाविंशति गणधर चत्त्वारिंशत सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत के आठ दश, मल्ली आदि गणेश।
तीस सहस मुनिराज थे, पाए मार्ग विशेष॥20॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनस्य मल्लि आदि अष्टादश गणधर त्रिंशत सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुप्रभादि नमिनाथ के, गणधर सत्रह खास।
तीस सहस मुनि अन्य थे, पूरी करते आस॥21॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनस्य सुप्रभादि सप्तदश गणधर विंशति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह नेमीनाथ के, वरदत्तादि गणेश।
सहस अठारह अन्य मुनि, धरे दिगम्बर भेष॥22॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनस्य वरदत्तादि एकादश गणधर अष्टादश सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर पारसनाथ के, स्वयंभ्वादि दश जान।
अन्य मुनी सोलह सहस, हुए गुणों की खान॥23॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ स्वयंभू आदिदश गणधर षोड्स सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह गणधर वीर के, गौतमादि विख्यात।
चौदह सहस मुनीश पद, झुका रहे हम माथ॥24॥

ॐ ह्रीं श्री वीर जिनस्य इन्द्रभूति गौतमादि एकादश गणधर चतुर्दश सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसों तीर्थेश के गणधर सर्व महान।
चौदह सौ बावन कहे, करते हम गुणगान॥
अष्टाविंशति लाख अरु, अड़तालीस हजार।
सप्त संघ के मुनीपद, वन्दन बारम्बार॥25॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिनस्य द्विपचांशदधिक चतुर्दशशतगणधर एवं सर्व मुनीश्वरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य मंत्रः ॐ ह्रीं क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं श्री गणधरेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा– तीर्थंकर गणधर मुनी, होते पूज्य त्रिकाल।
चौंसठ ऋद्धीवान की, गाते हैं जयमाल॥

(शम्भू छन्द)

परिशुद्ध हृदय जिनका निर्मल, गुणगण के अनुपम कोष रहे।
तीर्थंकर जिनके गण नायक, आगम में गणधर देव कहे॥
जो मति श्रुत अवधि मन:पर्यय, शुभ चार ज्ञान के धारी हैं।
प्रभु भौतिक तत्वों के ज्ञाता, अरु पूर्ण रूप अविकारी हैं॥1॥
स्याद्वाद ज्ञान गंगाधारी, पर मत का खण्डन करते हैं।
अनेकांत भाव पाने वाले, गुरु पंच महाव्रत धरते हैं॥
जो अंग पूर्व के धारी हैं, अष्टांग निमित्त के ज्ञाता हैं।
शुभ दिव्य देशना झेल रहे, जग में भव्यों के त्राता हैं॥2॥
गुरु अष्ट ऋद्धि के धारी हैं, जिन प्रज्ञा श्रमण कहाते हैं।
शुभ स्वप्न शकुन ज्योतिष ज्ञाता, तन परमौदारिक पाते हैं॥
जो अनेकांत के धारी हैं, एकान्त ध्यान में लीन रहे।
हैं परम अहिंसा व्रतधारी, गणधर जिनेन्द्र के श्रेष्ठ कहे॥3॥
गुरु घोर पराक्रम के धारी, जो घोर परीषह सहते हैं।
हर एक विषमता को सहकर, जो शान्त भाव से रहते हैं॥
तीर्थंकर जिनके दिव्य वचन, ॐकार रूप से आते हैं।
किरणों की प्रखर रोशनी सम, गणधर में आन समाते हैं॥4॥
जिन वचन महोदधि है अनन्त, जिसका होता न अंत कहीं।
शत् इन्द्र चक्रवर्ति आदी, जिन संत समझते पूर्ण नहीं॥
गणधर गूंथित जैनागम ही, भवि जीवों का ज्ञान प्रदाता है।
रत्नत्रय धर्म प्रदायक है, जो मोक्ष महल का दाता है॥5॥
जिनधर्म धारकर भवि प्राणी, कर्मों का पूर्ण विनाश करें।
फिर अनन्त चतुष्टय को पाकर, जिन केवल ज्ञान प्रकाश करें॥
हम तीन काल के तीर्थंकर, गणधर को शीश झुकाते हैं।
अब गुण पाने जिन गणधर के, हम चरण शरण को पाते हैं॥6॥

(छन्द घत्तानन्द)

जिन पद अनुगामी, गणधर स्वामी, मोक्षमार्ग के पथगामी।
जय गण के स्वामी, तुम्हें नमामी, द्रव्य भाव श्रुतधर नामी॥

ॐ ह्रीं क्ष्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नम: श्री चतुर्विंशति तीर्थंकराणां श्री वृषभसेनादि एक सहस्र चतुर्शतक द्विपंचाशत गणधरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के पद नमूँ, गणधर करूँ प्रणाम।
पुष्पांजलि करके 'विशद', पाऊँ मुक्तीधाम॥

॥ पुष्पांजलि क्षिपेत्॥

जाप्य - ॐ ह्रीं समवशण स्थित धर्म चक्राय नम:।

समुच्चय जयमाला

दोहा- धर्म धुरन्धर धर्मधर, धर्म चक्र के ईश।
धर्म देशना के लिए, चरण झुकाते शीश॥

(शम्भू छन्द)

हे धर्म चक्र के नायक जिन, तीर्थेश आप कहलाते हो
तुम समवशण की सभा मध्य, प्रभु अधर में शोभा पाते हो।
हैं समवशरण के चार कोट, वेदी हैं पाँच रत्न वाली।
शुभ रंग बिरंगी आठ भूमि, शुभ तीन पीठ महिमाशाली।
शुभ प्रथम पीठ पर धर्म चक्र, यक्षों के सिर शोभा पाते।
द्वितिय पर ध्वज फहराते हैं, तृतिय पर गंध कुटी गाते॥
इस गंधकुटी के भी ऊपर, जिनवर जी अधर विराज रहे।
चारों दिश में दर्शन होते, जिनवर के अतिशय श्रेष्ठ कहे॥
है रत्नत्रय जग में पावन, चेतन के षड्गुण बतलाए।
दशधर्म के धारी जिन मुनिवर, नव देव श्रेष्ठ पावन गाए॥
चौबिस तीर्थंकर के गणधर, जिनवाणी झेला करते हैं।
चौंसठ ऋद्धी के धारी हो, जिन सिद्धशिला को वरते हैं॥
तीर्थेश आपका द्वार श्रेष्ठ, बश मेरा एक ठिकाना है।
हम भूल गये सारे जग को, जबसे तुमको पहिचाना है।
रंगीन राग जग भोगों को, पाकर के सदा लुभाते हैं।
फिर सूल कर्म के चुभते जब, शांती इस दर पे पाते हैं॥1॥
तुमने जड़ चेतन को जाना, फिर भेद ज्ञान प्रगटाया है।
श्रद्धान ज्ञान चारित पाकर, निज का ही ध्यान लगाया है॥
तप घोर धारकर के तुमने, अपने कर्मों का नाश किया।
चेतन की शक्ती प्रगटाई, निज केवल ज्ञान प्रकाश किया॥2॥

सौधर्म इन्द्र की आज्ञा पा, धनपति कुबेर पद में आता।
रत्नों का समवशरण अनुपम, नत हो आकर के बनवाता॥
सौ इन्द्र चरण में आकर के, भक्ती से शीश झुकाते हैं।
हर्षित होकर के इन्द्र सभी, प्रभु की जयकार लगाते हैं॥3॥
सुर नर पशु आते चरणों में, प्रभु की वाणी सब सुनते हैं।
आध्यात्म सरोवर में मानो, आकर के मोती चुनते हैं॥
हो जाते माला-माल सभी, जो द्वार आपके आते हैं।
लूले लंगड़े बहरे गूंगे, आदिक सौभाग्य जगाते हैं॥4॥
हे नाथ आपके दर्शन को, हम नयन बिछाकर बैठे हैं।
जिनने दर्शन पाये तुमरे, उनके सब संकट मैटे हैं॥
भक्तों का प्रभु कल्याण करो, मेरी विनती स्वीकार करो।
जैसे तुम भव से पार हुए, हमको भी भव से पार करो॥5॥
जब तक संसार वास मेरा, तब तक चरणों का साथ मिले।
जब तक श्वाँसें चलती मेरी, तब तक प्रभु आशीर्वाद मिले॥
इस देह की देहरी में स्वामी, अब सम्यक्ज्ञान का दीप जले।
हम नाथ जपें निज भावों से, जब तक मेरी यह श्वाँस चले॥6॥
अंतिम इच्छा मम जिन पूरी, हे नाथ! आपको करना है।
खाली झोली लेकर आया, वह पूर्ण आपको भरना है॥
हम रत्नत्रय के रत्न प्रभु, इस दर पर पाने आए हैं।
वह रत्न हमें दो "विशद" आप, जो रत्न आपने पाए हैं॥7॥

दोहा- निज आतम का बोध हो, रत्नत्रय का ज्ञान।
मोक्ष मार्ग पर हम चले, पाए निज कल्याण॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित धर्म चक्र शोभित चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- जब तक तन में श्वाँस है, जपें आपका नाम।
पूरी हो यह कामना, बारम्बार प्रणाम॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

प्रशस्ति

ॐ नमः सिद्धेभ्यः श्री मूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये बलात्कार गणे सेन गच्छे नन्दी संघस्य परम्परायां श्री आदि सागराचार्य जातास्तत् शिष्यः श्री महावीरकीर्ति आचार्य जातास्तत् शिष्याः श्री विमलसागराचार्या जातास्तत शिष्या श्री भरत सागराचार्य श्री विराग सागराचार्याः जातास्तत् शिष्याः आचार्य विशदसागराचार्य जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे दिल्ली प्रान्ते शास्त्री नगर स्थित 1008 श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर मध्ये अद्य वीर निर्वाण सम्वत् 2538 वि.सं. 2069 मासोत्तम मासे द्वितिय भादौ मासे शुक्लपक्षे बारसतिथि दिन गुरुवासरे अर्हत धर्मचक्र विधान रचना समाप्ति इति शुभं भूयात्।

vkjrh /keZ&pØ dh

तर्ज-भक्ति बेकरार है......

समवशरण शुभकार है, अतिशय मंगलकार है।
धर्मचक्र की आरती करके, होती जय जयकार है।।
आत्म ध्यान करके तीर्थंकर, केवलज्ञान जगाते हैं।
कर्म घातिया के नशते ही, अनन्त चतुष्टय पाते हैं।।1।।
समवशरण........

धन कुबेर इन्द्राज्ञा पाकर, स्वर्ग लोक से आता है।
खुश होकर के श्री जिनेन्द्र का, समवशरण बनवाता है।।2।।
समवशरण........

अष्ट भूमियाँ समवशरण में, गंध कुटी अतिशयकारी।
आकर के सौधर्म इन्द्र भी, महिमा गावे मनहारी।।3।।
समवशरण........

प्रथम पीठ पर यक्षों के सिर, धर्मचक्र शोभा पावें।
चतुर्दिशा में अतिशयकारी, मानो जिन के गुणगावें।।4।।
समवशरण........

कमलाशन पर अधर प्रभू जी, दिव्य ध्वनि सुनाते हैं।
भव्य जीव सुनकर सद्रदर्शन, सम्यक् चारित पाते हैं।।5।।
समवशरण........

प. पू. 108 आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज की पूजन

पुण्य उदय से हे! गुरुवर, दर्शन तेरे मिल पाते हैं।
श्री गुरुवर के दर्शन करके, हृदय कमल खिल जाते हैं॥
गुरु आराध्य हम आराधक, करते उर से अभिवादन।
मम् हृदय कमल से आ तिष्ठो, गुरु करते हैं हम आह्वानन्॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

सांसारिक भोगों में फँसकर, ये जीवन वृथा गंवाया है।
रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार न पाया है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, निर्मल जल हम लाए हैं।
भव तापों का नाश करो, भव बंध काटने आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध रूप अग्नि से अब तक, कष्ट बहुत ही पाये हैं।
कष्टों से छुटकारा पाने, गुरु चरणों में आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, चंदन घिसकर लाये हैं।
संसार ताप का नाश करो, भव बंध नशाने आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय संसार ताप विध्वंशनाय चंदनं नि. स्वा.।

चारों गतियों में अनादि से, बार-बार भटकाये हैं।
अक्षय निधि को भूल रहे थे, उसको पाने आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अक्षय अक्षत लाये हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें, हम गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् नि. स्वा.।

काम बाण की महावेदना, सबको बहुत सताती है।
तृष्णा जितनी शांत करें वह, उतनी बढ़ती जाती है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, पुष्प सुगंधित लाये हैं।
काम बाण विध्वंश होय गुरु, पुष्प चढ़ाने आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय कामबाण पुष्पं निर्व. स्वा.।

काल अनादि से हे गुरुवर! क्षुधा से बहुत सताये हैं।
खाये बहु मिष्ठान जरा भी, तृप्त नहीं हो पाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, नैवेद्य सुसुन्दर लाये हैं।
क्षुधा शांत कर दो गुरु भव की! क्षुधा मेटने आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वा.।

मोह तिमिर में फंसकर हमने, निज स्वरूप न पहिचाना।
विषय कषायों में रत रहकर, अंत रहा बस पछताना॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, दीप जलाकर लाये हैं।
मोह अंध का नाश करो, मम् दीप जलाने आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं नि. स्वा.।

अशुभ कर्म ने घेरा हमको, अब तक ऐसा माना था।
पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना था॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, धूप जलाने आये हैं।
आठों कर्म नशाने हेतू, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि. स्वा.।

पिस्ता अरु बादाम सुपाड़ी, इत्यादि फल लाये हैं।
पूजन का फल प्राप्त हमें हो, तुमसा बनने आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, भाँति-भाँति फल लाये हैं।
मुक्ति वधु की इच्छा करके, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोक्ष फल प्राप्ताय फलं नि. स्वा.।

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वा.।

जयमाला

दोहा– **विशद सिंधु गुरुवर मेरे, वंदन करूँ त्रिकाल।**
मन-वन-तन से गुरु की, करते हैं जयमाला॥

गुरुवर के गुण गाने को, अर्पित है जीवन के क्षण-क्षण।

श्रद्धा सुमन समर्पित हैं, हर्षायें धरती के कण-कण॥
छतरपुर के कुपी नगर में, गूँज उठी शहनाई थी।
श्री नाथूराम के घर में अनुपम, बजने लगी बधाई थी॥
बचपन में चंचल बालक के, शुभादर्श यूँ उमड़ पड़े।
ब्रह्मचर्य व्रत पाने हेतु, अपने घर से निकल पड़े॥
आठ फरवरी सन् छियानवे को, गुरुवर से संयम पाया।
मोक्ष ज्ञान अन्तर में जागा, मन मयूर अति हर्षाया॥
पद आचार्य प्रतिष्ठा का शुभ, दो हजार सन् पाँच रहा।
तेरह फरवरी बंसत पंचमी, बने गुरु आचार्य अहा॥
तुम हो कुंद-कुंद के कुन्दन, सारा जग कुन्दन करते।
निकल पड़े बस इसलिए, भवि जीवों की जड़ता हरते॥
मंद मधुर मुस्कान तुम्हारे, चेहरे पर बिखरी रहती।
तव वाणी अनुपम न्यारी है, करुणा की शुभ धारा बहती है॥
तुममें कोई मोहक मंत्र भरा, या कोई जादू टोना है।
है वेश दिगम्बर मनमोहक अरु, अतिशय रूप सलौना है॥
हैं शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अन्जाना।
हम पूजन स्तुति क्या जाने, बस गुरु भक्ति में रम जाना॥
गुरु तुम्हें छोड़ न जाएँ कहीं, मन में ये फिर-फिरकर आता।
हम रहें चरण की शरण यहीं, मिल जाये इस जग की साता॥
सुख साता को पाकर समता से, सारी ममता का त्याग करें।
श्री देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, मन-वच-तन अनुराग करें॥
गुरु गुण गाएँ गुण को पाने, औ सर्वदोष का नाश करें।
हम विशद ज्ञान को प्राप्त करें, औ सिद्ध शिला पर वास करें॥
ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वा.।

दोहा– गुरु की महिमा अगम है, कौन करे गुणगान।
मंद बुद्धि के बाल हम, कैसे करें बखान॥
(इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

e e e

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्जः–माई री माई मुंडरे पर तेरे बोल रहा कागा...)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारें, आरति मंगल गावें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्....4 मुनिवर के....

ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता॥
सत्य अहिंसा महाव्रती की...2, महिमा कही न जाये।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्....4 मुनिवर के....

सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया॥
जग की माया को लखकर के....2, मन वैराग्य समावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के....

जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा॥
गुरु की भक्ति करने वाला...2, उभय लोक सुख पावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्....4 मुनिवर के....

धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे॥
आशीर्वाद हमें दो स्वामी....2, अनुगामी बन जायें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के...जय...जय॥

रचयिता : **श्रीमती इन्दुमती गुप्ता**, श्योपुर

प.पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री 108 विशदसागर जी महाराज द्वारा रचित पूजन महामंडल विधान साहित्य सूची

1. श्री आदिनाथ महामण्डल विधान
2. श्री अजितनाथ महामण्डल विधान
3. श्री संभवनाथ महामण्डल विधान
4. श्री अभिनन्दननाथ महामण्डल विधान
5. श्री सुमतिनाथ महामण्डल विधान
6. श्री पद्मप्रभ महामण्डल विधान
7. श्री सुपार्श्वनाथ महामण्डल विधान
8. श्री चन्द्रप्रभु महामण्डल विधान
9. श्री पुष्पदंत महामण्डल विधान
10. श्री शीतलनाथ महामण्डल विधान
11. श्री श्रेयांसनाथ महामण्डल विधान
12. श्री वासुपूज्य महामण्डल विधान
13. श्री विमलनाथ महामण्डल विधान
14. श्री अनन्तनाथ महामण्डल विधान
15. श्री धर्मनाथ जी महामण्डल विधान
16. श्री शांतिनाथ महामण्डल विधान
17. श्री कुंथुनाथ महामण्डल विधान
18. श्री अरहनाथ महामण्डल विधान
19. श्री मल्लिनाथ महामण्डल विधान
20. श्री मुनिसुव्रतनाथ महामण्डल विधान
21. श्री नमिनाथ महामण्डल विधान
22. श्री नेमिनाथ महामण्डल विधान
23. श्री पार्श्वनाथ महामण्डल विधान
24. श्री महावीर महामण्डल विधान
25. श्री पंचपरमेष्ठी विधान
26. श्री णमोकार मंत्र महामण्डल विधान
27. श्री सर्वसिद्धीप्रदायक श्री भक्तामर महामण्डल विधान
28. श्री सम्मेद शिखर विधान
29. श्री श्रुत स्कंध विधान
30. श्री यागमण्डल विधान
31. श्री जिनबिम्ब पंचकल्याणक विधान
32. श्री त्रिकालवर्ती तीर्थंकर विधान
33. श्री कल्याणकारी कल्याण मंदिर विधान
34. लघु समवशरण विधान
35. सर्वदोष प्रायश्चित विधान
36. लघु पंचमेरू विधान
37. लघु नंदीश्वर महामण्डल विधान
38. श्री चंवलेश्वर पार्श्वनाथ विधान
39. श्री जिनगुण सम्पतिविधान
40. एकीभाव स्तोत्र विधान
41. श्री ऋषि मण्डल विधान
42. श्री विषापहार स्तोत्र महामण्डल विधान
43. श्री भक्तामर महामण्डल विधान
44. वास्तु महामण्डल विधान
45. लघु नवग्रह शांति महामण्डल विधान
46. सूर्य अरिष्टनिवारक श्री पद्मप्रभ विधान
47. श्री चौंसठ ऋद्धि महामण्डल विधान
48. श्री कर्मदहन महामण्डल विधान
49. श्री चौबीस तीर्थंकर महामण्डल विधान
50. श्री नवदेवता महामण्डल विधान
51. वृहद ऋषि महामण्डल विधान
52. श्री नवग्रह शांति महामण्डल विधान
53. कर्मजयी 1008 श्री पंच बालयति विधान
54. श्री तत्वार्थसूत्र महामण्डल विधान
55. श्री सहस्रनाम महामण्डल विधान
56. वृहद नंदीश्वर महामण्डल विधान
57. महामृत्युंजय महामण्डल विधान
59. श्री दशलक्षण धर्म विधान
60. श्री रत्नत्रय आराधना विधान
61. श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान
62. अभिनव वृहद कल्पतरू विधान
63. वृहद श्री समवशरण महामण्डल विधान
64. श्री चारित्र लब्धि महामण्डल विधान
65. श्री अनन्तव्रत महामण्डल विधान
66. कालसर्पयोग निवारक महामण्डल विधान
67. श्री आचार्य परमेष्ठी महामण्डल विधान
68. श्री सम्मेद शिखर कूटपूजन विधान
69. त्रिविधान संग्रह-1
70. त्रिविधान संग्रह-2
71. पंच विधान संग्रह
72. श्री इन्द्रध्वज महामण्डल विधान
73. लघु धर्म चक्र विधान
74. अर्हत महिमा विधान
75. सरस्वती विधान
76. विशद महाअर्चना विधान
77. विधान संग्रह (प्रथम)
78. विधान संग्रह (द्वितीय)
79. कल्याण मंदिर विधान (बड़ा गांव)
80. श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ विधान
81. विदेह क्षेत्र महामण्डल विधान
82. अर्हत नाम विधान
83. सम्यक् अराधना विधान
84. श्री सिद्ध परमेष्ठी विधान
85. लघु नवदेवता विधान
86. विशद पञ्चागम संग्रह
87. जिन गुरु भक्ति संग्रह
88. धर्म की दस लहरें
89. स्तुति स्त्रोत संग्रह
90. विराग वंदन
91. बिन खिले मुरझा गए
92. जिंदगी क्या है
93. धर्म प्रवाह
94. भक्ति के फूल
95. विशद श्रमण चर्या
96. रत्नकरण्ड श्रावकाचार चौपाई
97. इष्टोपदेश चौपाई
98. द्रव्य संग्रह चौपाई
99. लघु द्रव्य संग्रह चौपाई
100. समाधितन्त्र चौपाई
101. शुभषितरत्नावली
102. संस्कार विज्ञान
103. बाल विज्ञान भाग-3
104. नैतिक शिक्षा भाग-1, 2, 3
105. विशद स्तोत्र संग्रह
106. भगवती आराधना
107. चिंतवन सरोवर भाग-1
108. चिंतवन सरोवर भाग-2
109. जीवन की मन:स्थितियाँ
110. आराध्य अर्चना
111. आराधना के सुमन
112. मूक उपदेश भाग-1
113. मूक उपदेश भाग-2
114. विशद प्रवचन पर्व
115. विशद ज्ञान ज्योति
116. जरा सोचो तो
117. विशद भक्ति पीयूष
118. विशद मुक्तावली
119. संगीत प्रसुन
120. आरती चालीसा संग्रह
121. भक्तामर भावना
122. बड़ा गाँव आरती चालीसा संग्रह
123. सहस्रकूट जिनार्चना संग्रह
124. विशद महाअर्चना संग्रह
125. विशद जिनवाणी संग्रह
126. विशद वीतरागी संत
127. काव्य पुञ्ज
128. पञ्च जाप्य
129. श्री चंवलेश्वर का इतिहास एवं पूजन चालीसा संग्रह
130. विजोलिया तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह
131. विराटनगर तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह